जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2528

जलमंदिर नैनागिरि

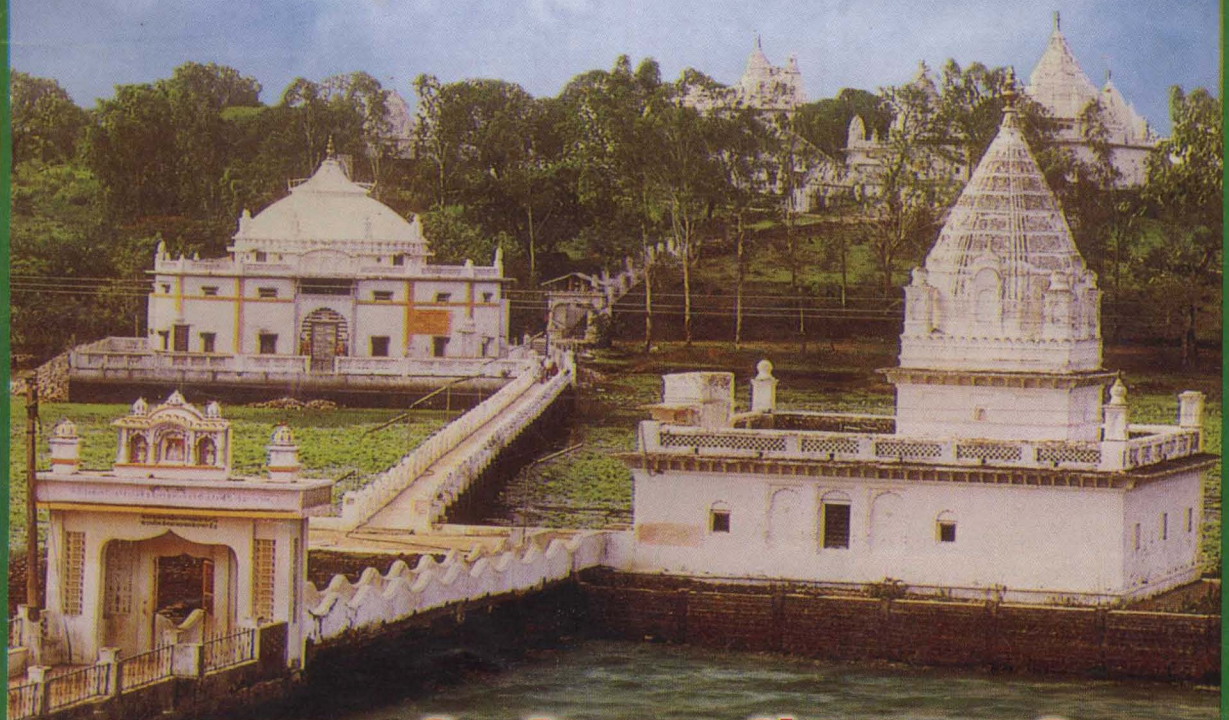

भगवान महावीर की 2601 वीं जन्म जयन्ती

भोपाल की धरती पर लोकोत्तर आत्मा के चरण

चैत्र, वि. सं. 2059 अप्रैल 2002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

जिनभाषित

अप्रैल 2002

मासिक

वर्ष 1, अंक 3

सम्पादक
डॉ. रतनचन्द्र जैन

कार्यालय
137, आराधना नगर,
भोपाल- 462003 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-776666

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया
पं. रतनलाल बैनाड़ा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती'

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश राणा, जयपुर

द्रव्य-औदार्य
श्री अशोक पाटनी
(मे.आर.के.मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-351428, 352278

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

- **विशेष समाचार**
  - तलघर से निकली स्फटिकमणि की अलौकिक प्रतिमाएँ 1
  - भोपाल में आचार्य श्री विद्यासागर जी की भव्य अगवानी 2
  - जैन समाज के सामने चुनौती 2
  - कन्नौज (उ.प्र.) में पंचकल्याणक का आयोजन 3
  - प्रवेश सूचना - सांगानेर 3
- **आपके पत्रः धन्यवाद** 4
- **वर्णी-वचनामृत** 5
- **सम्पादकीय** : भोपाल की धरती पर लोकोत्तर आत्मा के चरण 6
- **प्रवचन** : भगवान् महावीर का संदेश : आचार्य श्री विद्यासागर जी 7
- **लेख**
  - तीर्थंकर महावीर : जीवनदर्शन : मुनि श्री समतासागर जी 9
  - भगवान् महावीर की प्रासंगिकता : प्राचार्य निहालचन्द्र जैन 12
  - नैनागिरि : एक झलक : सुरेश जैन, आई.ए.एस. 14
  - बाबा भागीरथी..गणेश प्रसादजी वर्णी : डॉ. श्रीमती रमा जैन 17
  - आप नव निर्माण से..... : डॉ. सुरेन्द्र 'भारती' 19
  - शाकाहार एवं मांसाहार : एक तुलनात्मक... : कु. रजनी जैन 21
  - प्राकृतिक चिकित्सा परिचय : डॉ. रेखा जैन 25
- **जिज्ञासा समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा 27
- **बालवार्ता** : लोभ से परे है समयसार : डॉ. सुरेन्द्र 'भारती' 29
- **कविताएँ**
  - नमोऽस्तु : क्या वह अपराध है ? : सरोज कुमार 3
  - जन्मतिथि पर महावीर की : मुनि श्री समतासागर जी 11
  - गीत : डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय 11
  - गज़ल : ऋषभ समैया 'जलज' 16
  - राजुल गीत : श्रीपाल जैन 'दिवा' 26
  - मेरी भावधारा कहती है : डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' 26
- **समाचार** 18, 20, 30, 31, 32
- **खाद्य पदार्थों पर चिह्न बनाना अनिवार्य** आवरण पृष्ठ 3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेष समाचार

तलघर से निकली स्फटिकमणि की अलौकिक प्रतिमाएँ

24 मार्च, रविवार की सुबह विश्वविख्यात अतिशय क्षेत्र चाँदखेड़ी के इतिहास में एक नया संदेश लेकर आई, जब यहाँ विराजमान आचार्य विद्यासागर जी महाराज के परम शिष्य मुनिपुंगव 108 श्री सुधासागर जी महाराज ने आदिनाथ भगवान की प्रतिमा के पीछे तलघर में स्थित मंदिर की मूलनायक चंदप्रभु भगवान की प्रतिमा को दर्शनार्थ बाहर लाने की घोषणा की। यह खबर सुनते ही हाड़ौती अंचल के हजारों जैन-अजैन नर-नारियों का जन-सैलाब चाँदखेड़ी की ओर उमड़ पड़ा। दर्शनार्थियों की भीड़ इतनी अधिक थी कि व्यवस्थापकों के लिए उसे नियंत्रित करना मुश्किल हो गया। सभी के मन में सिर्फ एक ही ललक थी- गुफा में स्थित प्रतिमाओं के दर्शन करना।

उल्लेखनीय है कि चाँदखेड़ी में आदिनाथ भगवान की प्रतिमा के पीछे चंद्रप्रभु भगवान की अलौकिक प्रतिमा विराजमान थी, जिसके होने की पुष्टि आचार्य विमलसागर जी महाराज समेत कई आचार्य कर चुके थे। यह चंद्रप्रभु भगवान की प्रतिमा ही मन्दिर की मूलनायक प्रतिमा है, जिसे बरसों पूर्व सुरक्षा की दृष्टि से मन्दिर की गुफा में विराजमान कर दिया गया होगा। इतने वर्षों से देवतागण इस प्रतिमा की रक्षा कर रहे थे। मन्दिर का मुख्य शिखर भी इसी प्रतिमा के ऊपर है।

शाम चार बजे जैसे ही मुनि सुधासागर जी महाराज तलघर से बर्फ के समान स्फटिक मणि की प्रतिमाएँ लेकर बाहर निकले तो वहाँ उपस्थित श्रद्धालुओं की आँखें खुशी से छलक गईं। पूरा मन्दिर आदिनाथ भगवान और मुनि सुधासागर जी महाराज के जयकारों से गूँज उठा। मुनिश्री क्रम से चंद्रप्रभु भगवान् समेत तीन प्रतिमाओं को बाहर लेकर आए। इनमें से मूलनायक चंद्रपभु भगवान की प्रतिमा स्फटिक मणि से निर्मित थी, जिसकी ऊँचाई करीब ढाई फीट है। मुनिश्री ने कहा कि चंद्रप्रभु भगवान् की स्फटिक मणि की इतनी विशाल प्रतिमा भारत में तो कम से कम आज तक कहीं नहीं देखी गई। इसके अलावा एक अन्य प्रतिमा जिस पर चिन्ह नहीं है तथा एक प्रतिमा पार्श्वनाथ भगवान की है, जिनकी ऊँचाई 1.5 फीट और एक फीट है।

जिसने भी इन प्रतिमाओं के दर्शन किए, उसके मुँह से सिर्फ यही शब्द निकले- "अलौकिक", अद्वितीय"। चाँदखेड़ी में उपस्थित हर व्यक्ति इन प्रतिमाओं के दर्शन कर अपने आप को धन्य कह रहा था। इन प्रतिमाओं को बाहर निकालने के पश्चात् विधिवत् मंत्रोच्चार के साथ इनका अभिषेक किया गया।

इससे पूर्व मुनिश्री ने श्रद्धालुओं से खचाखच भरे पाण्डाल को संबोधित करते हुए कहा कि 23 फरवरी को स्वप्न के दौरान गुलाबी पगड़ी व बादामी शेरवानी पहने एक अदृश्य शक्ति उन्हें मन्दिर में ले गई और तलघर का आधा रास्ता बताकर ही गायब हो गई। सुबह जब उन्होंने 'भद्रबाहु संहिता' में स्वप्न का फल देखा तो उसमें लिखा था कि स्वप्न का फल विलम्ब से मिलेगा। वे स्वप्न को लेकर शंकित थे। 24 मार्च को पुनः वही अदृश्य शक्ति स्वप्न में प्रकट हुई और उसने कहा कि "शंका मत करो, जिनबिम्ब अवश्य ही मिलेंगे" और साथ ही जिनबिम्ब बाहर निकालने की विधि भी बतलाई। जब उन्होंने इस स्वप्न का फल 'भद्रबाहु संहिता' में देखा तो उसमें लिखा था कि स्वप्न का फल अवश्य मिलेगा।

मुनिश्री ने बताया कि 25 मार्च को प्रातः 5 बजे से ऊपर बाहुबली भगवान के दक्षिण में स्थित द्वार से तलघर में उतरे तो वहाँ उन्हें लगभग 12 फीट नीचे इन अलौकिक प्रतिमाओं के दर्शन हुए। इसके पश्चात् उन्होंने बाहर आकर दोपहर 2 बजे इन प्रतिमाओं को दर्शनार्थ बाहर लाने की घोषणा कर दी। मुनिश्री ने कहा कि यदि वे स्वप्न की बात को पहले ही उजागर कर देते और जिनबिम्ब नहीं निकलते तो अच्छा नहीं होता। आखिर स्वप्न तो स्वप्न ही है।

मुनिश्री ने उपस्थित जनसमुदाय से कहा कि भारत का प्रत्येक नागरिक इन प्रतिमाओं के दर्शन एवं अभिषेक करके जीवन को धन्य करे। उन्होंने कहा कि वे इस क्षेत्र पर पहली बार आए हैं और यहाँ पर ऐसे अलौकिक जिनबिम्ब विराजमान होंगे, ऐसा उन्हें विश्वास नहीं था। चाँदखेड़ी भारत का दूसरा अतिशय क्षेत्र है, जहाँ पर तलघर से अलौकिक जिनबिम्ब बाहर निकाले गए। इससे पहले वे सांगानेर के तलघर से ऐसे जिनबिम्ब को बाहर लेकर आए थे।

मुनिश्री ने कहा कि इन प्रतिमाओं को सिर्फ 6 अप्रैल (वार्षिक मेले के दिन) तक ही दर्शनार्थ बाहर रखने की अनुमति मिली है। इसके पश्चात् प्रतिमाओं को पुनः तलघर में विराजमान कर दिया जाएगा।

इन प्रतिमाओं को निकालने के पश्चात् चाँदखेड़ी मन्दिर की प्राचीनता से जुड़े कई प्रश्न सामने आ गए हैं। मुनिश्री के अनुसार इस मन्दिर का इतिहास ही लगभग बारह सौ वर्ष पुराना है और ये प्रतिमाएँ तो उससे भी प्राचीन हैं। ये प्रतिमाएँ कितने वर्षों से तलघर में रखी हुई थीं, यह कोई नहीं जानता। संभवतः आततायियों के आक्रमण से बचाने के लिए इन प्रतिमाओं को सुरक्षित रख

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिया गया होगा। मुनिश्री ने कहा कि चंद्रप्रभु भगवान की प्रतिमा के नाम पर ही इस क्षेत्र का नाम चाँदखेड़ी रखा गया।

इन प्रतिमाओं के निकलने के पश्चात् सम्पूर्ण भारतवर्ष में हर्ष की लहर है और क्षेत्र पर इन दिनों मेला सा लगा हुआ है। देश के कोने-कोने से यहाँ श्रद्धालु पहुँच रहे हैं और इन प्रतिमाओं तथा मुनिश्री के दर्शन कर स्वयं को धन्य कह रहे हैं। प्रतिदिन प्रात: 9 से 12 बजे एवं दोपहर 3 बजे से 5 बजे तक प्रतिमाओं का महामस्तकाभिषेक किया जाता है। श्रद्धालुओं के दर्शनार्थ 24 घंटे मन्दिर खुला रहता है। प्रबंध समिति की ओर से बाहर से पधारने वाले यात्रियों के आवास एवं भोजन की समुचित व्यवस्था की गई है।

शोभित जैन
C/o श्री, भँवर लाल बालचन्द्र जैन,
बाजार नं. 1, रामगंज मण्डी, कोटा

भोपाल में आचार्य श्री विद्यासागर जी की भव्य अगवानी

भोपाल के इतिहास में 17 अप्रैल चिरस्मरणीय दिवस रहेगा। 25 वर्षों की लंबी प्रतीक्षा के प्रश्चात् संत शिरोमणि आचार्य श्रीविद्यासागरजी महाराज ससंघ भोपाल नगर में दिनांक 17.4.2002 को प्रात: 8:00 बजे पधारे। सम्पूर्ण शासन-प्रशासन चौकस था। सभी राजनैतिक दलों के नेता अपने गणवेश में अगवानी हेतु छोलारोड पर अग्रवाल धर्मशाला के वहाँ उपस्थित थे। बेण्डबाजों की धुनें अपने ढंग से आचार्य श्री के स्वागत में स्वरांजलि अर्पित कर रही थीं। जन सैलाब में सभी धर्म के दर्शनार्थी-स्वागतार्थी अपनी उपस्थिति से सर्व धर्म समभाव का प्रत्यायन कर रहे थे। आचार्य श्री तेजगति से ईर्यासमिति के साथ ससंघ भोपाल नगर की ओर बढ़ रहे थे। सम्पूर्ण जैन समाज की आँखें उनके दर्शन को लालायित थीं। फोटोग्राफरों की आँखों के सामने से काले-कैमरे हट नहीं रहे थे। नर-नारी बाल-वृद्ध अधिकांश नंगे पैर संघ के साथ चल रहे थे। भीड़ में स्वत: अनुशासन का अभूतपूर्व दृश्य मन में आह्लाद भर रहा था। सभी जन आह्लाद से परिपूर्ण हर्ष के अश्रु से आपूरित नयनों से अपलक आचार्य श्री को निहार रहे थे। जिस प्रमुख मार्ग छोलारोड से आचार्य श्री ससंघ पधार रहे थे उसके दोनों ओर स्वागत व दर्शनार्थ जनसमूह खड़ा हुआ था। दोनों ओर के भवनों की छतें व छज्जे दर्शक दीर्घा का स्वरूप ले चुके थे जिसको जहाँ जगह मिली वहीं से दर्शनार्थ मोर्चा साधे था। जगह-जगह भक्त लोग भक्तिभाव से आरती उतारते अपने को धन्य करते अघा नहीं रहे थे। नगर के मार्ग, घर-द्वार केशरिया ध्वज-बेनर से पटे हुए अपने परम पूज्य संत का दिल खोलकर स्वागत कर रहे थे। भोपाल की धरती धन्य हो गई। आचार्य श्री की चरणरज माथे लगाकर। लग रहा था आचार्यश्री केवल जैनों के संत नहीं जन-जन के संत हैं। उनका निर्मल समता भाव सभी धर्म के लोगों को बाँधे था। उनके वात्सल्य की धारा में सभी बह रहेथे। मंदिर दर्शन के पश्चात् जवाहर चौक जुमेराती में अगवानी जुलूस धर्म सभा में परिवर्तित हुआ। सभी धर्म व दल के लोगों ने आचार्यश्री को श्रीफल भेंटकर आशीर्वाद ग्रहण किया। धर्म सभा में अपार जनसमूह आशीर्वचन प्राप्त कर कृतार्थ हुआ।

श्रीपाल जैन 'दिवा' भोपाल

जैन समाज के सामने चुनौती

जैन समाज को आज एक गंभीर समस्या व चुनौती का सामना करना है। हमारा प्राचीनतम व अनादिनिधन 'जैन धर्म एक स्वतंत्र धर्म-दर्शन है अथवा हिन्दू (वैदिक) धर्म की शाखा' इस सवाल पर सुप्रीम कोर्ट की 11 जजों की बेंच में 2 अप्रैल से सुनवाई प्रारंभ हो गयी है।

सुप्रीम कोर्ट के सामने मुख्य विषय था अल्पसंख्यक धर्मावलम्बियों के द्वारा संचालित शिक्षा संस्थाओं को मान्यता का क्या आधार हो तथा ऐसी शिक्षा संस्थाओं को क्या विशेष अधिकार/सुविधाएँ प्राप्त हों? क्योंकि देश में अनेक जैन शिक्षा संस्थाओं को भी इस प्रकार की मान्यता मिली हुई है, अत: कोर्ट के सामने यह प्रश्न भी जुड़ गया है कि मुसलमान, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी धर्मों के अलावा क्या जैन धर्म भी एक स्वतंत्र धर्म है। यदि इसका फैसला विपरीत होता है तो हमारा अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा और कालान्तर में जैन धर्म व जैन संस्कृति का लोप हो जाएगा।

भारत के संविधान की धारा 30 के अनुसार अल्पसंख्यक धर्मावलम्बियों को अपनी शिक्षा संस्थाएँ स्थापित करने तथा उनको सरकारी हस्तक्षेप के बिना संचालित करने का अधिकार प्राप्त है। ऐसी संस्थाओं में यह भी सुविधा उपलब्ध है कि जिस धार्मिक समाज ने संस्था स्थापित की है वह अपने समाज के छात्रों को प्राथमिकता के आधार पर कक्षाओं में प्रवेश दे सकता है एवं अपने धर्म की शिक्षा भी दे सकता है। यह सुविधा प्राप्त करना नि:संदेह जैन समाज के हित में है। यह और भी अधिक आवश्यक इसलिए हो गया है कि आरक्षण के कारण बच्चों को स्कूल-कॉलिजों तथा तकनीकी संस्थाओं में प्रवेश मिलना कठिन हो गया है। अल्पसंख्यक धार्मिक समुदायों को यह भी संरक्षण व विशेषाधिकार प्राप्त है कि सरकार उनके तीर्थक्षेत्रों अथवा न्यासों का प्रबंधन अपने हाथ में नहीं ले सकती।

देश के कई राज्यों में जैसे मध्यप्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, बिहार, बंगाल आदि में जैनों को अल्पसंख्यक धर्म के रूप में मान्यता प्राप्त है, परंतु कुछ अन्य राज्यों में केन्द्रीय अल्पसंख्यक आयोग की सिफारिश के बावजूद जैनों को बिना किसी कारण के अल्पसंख्यक मान्यता प्रदान नहीं की गई, जबकि संविधान की धारा 25 (2) के अनुसार भी जैन धर्म, बौद्ध व सिख धर्म के समकक्ष एक स्वतंत्र धर्म है। ये राज्य हैं उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब आदि। परंतु वहाँ भी जैन समाज सैकड़ों जैन शिक्षा संस्थाओं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का संचालन कर रहा है जिनमें कई को अल्पसंख्यकों की सुविधाएँ प्राप्त हैं। यदि किसी कारणवश सुप्रीम कोर्ट केवल सामाजिक रीति-रिवाजों के आधार पर जैन को वैदिक धर्म का एक अंग मान लेती है तो हमें कई प्रदेशों में मिली अल्पसंख्यक सुविधाएँ वापस ले ली जाएँगी, जिसका जैन छात्र-छात्राओं के भविष्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। अत: यह आवश्यक है कि इस दृष्टि से भी मुकद्मे की पैरवी पूरी तैयारी व तत्परता के साथ की जाए।

हम लोगों ने वरिष्ठतम वकीलों जैसे श्री नारीमन, श्री शांति भूषण तथा श्री पी.पी. राव को नियुक्त किया है। सुनवाई कई सप्ताह चल सकती है। इसलिए इस केस में 30 लाख रुपए के आसपास अनुमानित खर्च आएगा। सभी धर्मबंधु, जो समाज के प्रमुख व्यक्ति हैं तथा अनेक सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हैं, उनसे निवेदन है कि जैन समाज के हितों की रक्षा के लिए तथा इस केस में सफलता के लिए वे स्वयं एवं संस्थाओं की ओर से उदारतापूर्वक आर्थिक सहयोग दें। सहयोग राशि ड्राफ्ट या चैक द्वारा 'बी.डी.जे. तीर्थक्षेत्र कमेटी (माइनोरिटी)'' के नाम से भेज सकते हैं अथवा हमको सूचित करें तो नकद एकत्रित राशि आपसे स्वयं मँगाने का प्रबंध करे सकेंगे। ऐतिहासिक तथ्यों, दार्शनिक मान्यताओं तथा समय-समय पर मिले अदालती फैसलों के आधार पर हमें पूरी आशा है कि हम विजयी होंगे। किंतु यह तभी संभव होगा जब समस्त जैन समाज द्वारा संगठित प्रयास हों।

साहू रमेशचन्द्र जैन, राष्ट्रीय अध्यक्ष
अ.भा. दिगम्बर जैन परिषद्
('वीर' 7 अप्रैल 2002 से साभार)

कन्नौज (उ.प्र.) में पंचकल्याणक का आयोजन

दि. 10 मई से 15 मई 2002 तक इत्रनगरी कन्नोज (उ.प्र.) में संतशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी के सुयोग्य शिष्य 108 मुनि श्री समतासागर जी, 108 मुनि श्री प्रमाणसागर जी एवं 105 एलक श्री निश्चय सागर जी के सान्निध्य में पंचकल्याणक महोत्सव संपन्न होगा।

प्रवेश सूचना

सांगानेर (जयपुर)। श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान (आचार्य ज्ञान सागर छात्रावास) सांगानेर का षष्ठ सत्र 1 जुलाई सन् 2002 से प्रारंभ होगा। यह आधुनिक सुविधाओं से युक्त अद्वितीय छात्रावास है, जहाँ छात्रों की आवास, भोजन व पुस्तकादि की नि:शुल्क व्यवस्था रहती है।

इसमें सम्पूर्ण भारत से प्रवेश के लिए अधिक छात्र इच्छुक होने से विभिन्न प्रदेशों के लिए स्थान निर्धारित हैं। अत: स्थान सीमित हैं। धार्मिक अध्ययन सहित कुल पाँच वर्ष के पाठ्यक्रम में दो वर्षीय उपाध्याय (जो सीनियर हायर सेकेण्डरी के समक्षक है) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर से एवं त्रिवर्षीय शास्त्री स्नातक परीक्षा जो कि (बी.ए. के समक्षक) राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध है। यह सरकार द्वारा आई.ए.एस., आर.ए.एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये सर्वमान्य है।

जो छात्र प्रवेश के इच्छुक हों, वे प्रवेश फार्म मँगवाकर प्रार्थना-पत्र 30 अप्रैल 2002 तक अनिवार्य रूप से भिजवा दें।

जिन छात्रों ने 10वीं की परीक्षा (अंग्रेजी सहित) दी है, वे भी प्रवेश फार्म मँगा सकते हैं। इच्छुक छात्रों का प्रवेश चयन ''शिविर'' 5 मई से 12 मई 2002 तक आचार्य ज्ञानसागर छात्रावास सांगानेर, जयपुर में आयोजित है।

शिविर में अध्ययनरत शिविरार्थियों की परीक्षा/साक्षात्कार लिया जाकर चयन किया जावेगा।

सम्पर्क - अधीक्षक, श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान,
वीरोदय नगर, जैन नसियाँ रोड, सांगानेर,
जयपुर फोन नं. 0141-730552

नमोऽस्तु

क्या वह अपराध है ?

सरोज कुमार

जिन्हें प्रणाम करने की सोच
भी नहीं पाता
उनके दिख जाने पर
हाथ जुड़ जाते हैं
अपने आप, मशीनवत्।
यह बेखबरी खतरनाक है।

●

जिन्हें प्रणाम करने का मन सदैव होता है
उनके मिल जाने पर
ऐसा हो जाता हूँ भावाभिभूत,
कि हाथ भूल बैठते हैं
अपना कर्त्तव्य।
इतना अभिभूत होना उचित नहीं।

●

बेखबरी खतरनाक है
और अभिभूत होना उचित नहीं
पर जो घट जाता है
बिना कुछ किए
सहज-सहज अपने-आप
क्या वह अपराध है ?

'मनोरम'
37, पत्रकार कालोनी
इन्दौर (म.प्र.) 452001

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

जिनभाषित एक अनूठी पत्रिका है। इसके अन्तस्तत्त्व का अध्ययन करते ही पता चल जाता है कि इसमें उच्चकोटि के लेखक एवं मनीषियों के अत्यन्त उत्तम लेख हैं। पत्रिका में जैन समाज की चहुँमुखी प्रगति का आकलन भी किया है साथ ही जिज्ञासा का समाधान भी पाठक के मानस को सन्तुष्टि प्रदान करता है। मुझे चिंतनपूर्ण लेखों के अतिरिक्त संक्षिप्त कविताएँ बहुत आकर्षित करती हैं। पूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी के लेख आध्यात्मिक ज्ञान को अनुभवपूर्ण वाणी में मुमुक्षुओं के लिये प्रेरणा-प्रसून हैं। पत्रिका अपने कलात्मक आकार-प्रकार, उत्तम छपाई एवं मुखपृष्ठ के चित्र द्वारा पाठक पर गहरी छाप छोड़ती है। फरवरी, 2002 के अंक में सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरि का एक अत्यन्त आकर्षक विहंगम चित्र बरबस तीर्थ की ओर हमारे मन को आकर्षित करता है। पत्रिका अल्प समय में ही जैन समाज की एक अति उत्तम पत्रिका बन गई है।

'नई पीढ़ी' के सम्बन्ध में सम्पादकीय, उनकी अद्यतन भावनाओं की पारदर्शी विवेचना है।

डॉ. जयकृष्ण प्रसाद खण्डेलवाल
6/240 बेलनगंज
आगरा (उ.प्र.) 282002

एक श्रावक के घर दस्तक देता हुआ यदि जिनभाषित आ रहा है, तो यह उसका अहोभाग्य है। दिगम्बर जैन समाज की, इतने अल्प समय में शीर्ष स्थान ग्रहण करने वाली यह मासिकी अपनी गुणवत्ता के कारण ऐसी पहचान बना पायी है। इसके पीछे दो कारण नजर आ रहे हैं:

1. सम्पादक का वैशिष्ट्य-जो अध्यात्म, संस्कृत, प्राकृत और व्याकरण के निष्णात विद्वान हैं और सेवानिवृत्त प्रोफेसर।

2. समाज की धड़कन को, राडार की भाँति लक्ष्य कर एक सही प्रतिबिम्ब उजागर करना तथा चिन्तनशील, शोधपरक, वैज्ञानिक आलेखों के साथ परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर महाराज के वचनामृतों को किसी न किसी विधा में पाठकों को उपलब्ध कराना।

मुखपृष्ठ की बहुरंगी आभा में दिव्यमान किसी न किसी सिद्धक्षेत्र/अतिशय क्षेत्र का मनमोहक चित्र इसकी आस्था को द्विगुणित कर देता है।

कविताओं/गीतों का एक प्राञ्जल मापदण्ड सम्पादकजी ने सुनिश्चित कर चिंतन के क्षैतिज को बहुआयामी बनाया है।

'शंका-समाधान' अध्यात्म-जगत की ताजी खबर होती है, जिससे मासिकी की नव्य/अभिनवता बनी रहती है और इस उत्तरदायित्व को पं. रतनलाल बैनाड़ा बखूबी निभा रहे हैं। वर्षों की स्वाध्याय साधना मथकर नवनीत उगल रही है।

बोध कथाएँ और व्यंग्य किसी मासिकी का ऐसा ज्ञानात्मक प्रिय व्यंजन होता है, जिसे हर पाठक चखना चाहता है। जब पाठक गूढ़ चिंतनपरक लेखों से बोध कथाओं की संस्कारशीलता पर आँखें डालता है तो निश्चित ही वह अपने बच्चों को पुकारता होगा कि बेटा, आओ! यह पृष्ठ पढ़ो।

शिक्षा का श्रेयस संस्कारों का सिंहनाद हो/ होना चाहिए। 'जिनभाषित' ऐसा गुरु बनकर अवतरित हुआ है, जो ऐसी शिक्षा देने के लिए संकल्पित है, जो संस्कारों के बीज रोपण कर सके।

'विज्ञेषु किं अधिकम्'

प्राचार्य निहालचंद जैन
जवाहर वार्ड,
बीना (म.प्र.) -470113

'जिनभाषित' का मार्च अंक प्राप्त हुआ। सम्पूर्ण अंक ज्ञानस्तरीय सामग्री से समन्वित है। ब्र. महेश जैन, सांगानेर का लेख-आहारदान की विसंगतियाँ सिर्फ विचारणीय ही नहीं, अपितु अनुकरणीय हैं।

ब्र. संदीप 'सरल'
बीना (म.प्र.)

'जिनभाषित' का फरवरी, 2002 का अंक मिला। आपने 108 मुनि श्री प्रमाणसागरजी द्वारा लिखित शास्त्र 'जैन तत्त्वविद्या' का संक्षेप सार बताकर जैनधर्म के जिज्ञासु युवा वर्ग को यह शास्त्र पढ़ने के लिये प्रेरित किया। पढ़ने पर लगा, वास्तव में 'जैन तत्त्व विद्या' आधुनिक भाषा-शैली में लिखा वैज्ञानिक सन्दर्भों सहित प्रामाणिक ग्रन्थ है।

समय-समय पर इसी प्रकार के आधुनिक भाषा-शैली के ग्रन्थों का विवरण प्रकाशित करें तो युवावर्ग को लाभ मिलेगा।

मुखपृष्ठ पर मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र का चित्र देखकर मन प्रसन्न हुआ। प्रकृति का मनोहारी दृश्य देखकर क्षेत्र पर जाने की इच्छा बलवती हो गयी। काश! आप क्षेत्र का परिचय भी अन्दर के पृष्ठ पर देते तो खुशी होती। छपारा पंचकल्याणक पर दिये गये आचार्यश्री विद्यासागरजी के प्रवचन पढ़कर ऐसा लगा, मानो आचार्यश्री की आवाज सुन रहे हों। प्रवचन को पढ़कर हम 'जिनभाषित' के माध्यम से धन्य हो गये। 'संस्कार ही संतान के भविष्य का निर्धारण करते हैं', प्रवचन दिल को छू गया। ऐसे प्रवचनों के प्रकाशन से पत्रिका निश्चितरूप से युवावर्ग को सही दिशा देकर धर्म के प्रति रुचि जाग्रत करेगी।

अन्त में, यह सुझाव देना चाहूँगा कि पत्रिका समाचारों का प्रकाशन भी करे, जिससे देश को जैन समाज की गतिविधियों की जानकारी मिलती रहे।

पंकज कुमार गंगवाल
मंत्री-जैन नवयुवक मंडल, किशनगढ़-रैनवाल (राज.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जिनभाषित' का फरवरी, 2002 का अंक प्राप्त हुआ। सभी लेख और सम्पादकीय जैन समाज और संस्कृति के लिये अत्यन्त उपयोगी और मार्गदर्शक हैं। पत्रिका का स्तर इसी तरह बना रहा, तो निश्चित रूप से 'जिनभाषित' जैन पत्र-पत्रिकाओं में सर्वोच्च स्थान पर जा पहुँचेगा। इसके लिए आप जैसे सम्पादक और जिनभाषित का पूरा समाज बधाई और धन्यवाद का पात्र है।

विनोद कुमार तिवारी
रीडर- इतिहास विभाग
यू.आर.कॉलेज, रोसड़ा समस्तीपुर (बिहार)

'जिनभाषित' धार्मिक पत्रिका विद्वत्तापूर्ण लेखन और कुशल सम्पादन में प्रकाशित हो रही है। मुझे पाँच अंक प्राप्त हुए हैं। पाँचों अंकों में अनेक विशिष्ट सामग्रियाँ हैं, जो जिनवाणी, जैनागमों और पुराणों से पूर्णतया सम्मत हैं। प्रत्येक सम्पादकीय गम्भीर चिन्तन एवं समाज को दिशानिर्देश देने वाला है, जिससे जैन समाज के वर्तमान वातावरण और पर्यावरण में सुधार अपेक्षित है।

प्राय: प्रत्येक अंक में आदरणीय पं. रतनलाल जी बैनाड़ा का 'जिज्ञासा-समाधान' आगम और पुराणसम्मत पढ़ने को मिलता है, जो उनके आगमचक्षु होने का प्रमाण है और उनके गम्भीर अध्ययन तथा विद्वत्ता का परिचायक है। कभी 'जिज्ञासा-समाधान' ग्रन्थ का रूप धारण कर जैन साहित्य की श्रीवृद्धि अवश्य करेगा। फरवरी, 2002 के अंक में संस्कृत दर्शनपाठ का हिन्दी अनुवाद पढ़ने को मिला, जिसे ब्र. महेशजी ने किया है। प्रयास स्तुत्य है, परन्तु कहीं-कहीं भावों का प्रस्फुटन संस्कृत भाषा के अनुरूप नहीं हुआ है।

दसवें पद्य में 'सदा मेऽस्तु' को ध्यान में रखने पर अग्रिम पद्य में -

जिनधर्मविनिर्मुक्तो मा भवेच्चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासित: ॥

ऐसा पाठ होना चाहिए एवं तदनुसार हिन्दी अर्थ होना चाहिए। प्राचीन पाठ ऐसा ही है। अन्तिम पद्य-'प्रतिभासते मे' भी इसी ओर संकेत करता है।

इत्यलम्।

प्रो. हीरालाल पाण्डे
7, लखेरापुरा, भोपाल (म.प्र.)

वर्णी वचनामृत : पुरुषार्थ की वाणी

डॉ. श्रीमती रमा जैन

1. बाह्य क्रियाओं का आचरण करते हुए आभ्यन्तर की ओर दृष्टि रखना ही प्रथम पुरुषार्थ है।

2. पुरुषार्थी वही है, जिसने राग-द्वेष को नष्ट करने के लिये विवेक प्राप्त कर लिया है।

3. घर छोड़कर तीर्थस्थान में रहने में पुरुषार्थ नहीं, पण्डित महानुभावों की तरह ज्ञानार्जन कर जनता को उपदेश देकर सुमार्ग में लगाना पुरुषार्थ नहीं, दिगम्बर वेष भी पुरुषार्थ नहीं। सच्चा पुरुषार्थ तो वह है कि उदय के अनुसार जो रागादिक हों, वे हमारे ज्ञान में भी आवें, उनकी प्रवृत्ति भी हममें हो, किन्तु हम उन्हें कर्मज भाव समझकर इष्टानिष्ट कल्पना से अपनी आत्मा की रक्षा कर सकें।

4. पुरुषार्थ करना है तो उपयोग को निरन्तर निर्मल करने का पुरुषार्थ करो।

5. राग-द्वेष को बुद्धिपूर्वक जीतने का प्रयत्न करो, केवल कथा और शास्त्र-स्वाध्याय से ही ये दूर नहीं हो सकते। आवश्यक यह है कि पर वस्तु में इष्टानिष्ट कल्पना न होने दो। यही राग-द्वेष दूर करने का सच्चा पुरुषार्थ है।

6. कषायों के उदय प्राणी से नाना कार्य कराते हैं, किन्तु पुरुषार्थ ऐसी तीक्ष्ण खड्गधार है कि उन उदयजन्य रागादिकों की सन्तति को निर्मूल कर देती है।

7. स्वयं अर्जित राग-द्वेष की उत्पत्ति को हम नहीं रोक सकते, परन्तु उदय में आये रागदिकों द्वारा हर्ष-विषाद न करें। यह हमारे पुरुषार्थ का कार्य है।

8. अभिप्राय में मलिनता न होना ही पुरुषार्थ की विजय है।

त्याग की महत्ता

1. परिग्रह का जो त्याग आभ्यन्तर से होता है, वह कल्याण का मार्ग होता है और जो त्याग ऊपरी दृष्टि से होता है वह क्लेश का कारण होता है।

2. अधिक संग्रह ही संसार का मूल कारण है।

3. घर को त्याग कर मनुष्य जितना दम्भ करता है, वह अपने को प्राय: उतने ही जघन्य मार्ग में ले जाता है। अत: जब तक आभ्यन्तर कषाय न जावे, तब तक घर छोड़ने से कोई लाभ नहीं।

4. उस दान का कोई महत्त्व नहीं, जिसके करने पर लोभ न जावे।

5. दान कल्याण का प्रमुख मार्ग है।

6. आवश्यकताएँ कम करना भी तो त्याग है। बाह्य वस्तु का त्याग कठिन नहीं, आभ्यन्तर कषायों की निवृत्ति ही कठिन है।

81, छत्रसाल रोड, छतरपुर (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

भोपाल की धरती पर लोकोत्तर आत्मा के चरण

17 अप्रैल 2002 को भोपाल की धरती पर पहली बार उस लोकोत्तर आत्मा के मंगल चरण पड़े , जो दुनिया में परमपूज्य आचार्य विद्यासागर के नाम से प्रसिद्ध है। भोपाल की धरा पच्चीस वर्षों से पलकें बिछाकर उस लोकोत्तर आत्मा की बाट जोह रही थी। आखिरकार 17 अप्रैल 2002 म.प्र. की राजधानी के लिए वह ऐतिहासिक दिन बन गया, जिस दिन यह लम्बी प्रतीक्षा समाप्त हुई। प्रातः काल छह बजे से ही नगर के लोगों की भीड़ 'सूखी सेवनियाँ' ग्राम की ओर उमड़ पड़ी थी, जिस ओर से आचार्य श्री विद्यासागर जी अपने चालीस पिच्छियोंवाले विशाल संघ के साथ भोपाल की तरफ विहार कर रहे थे। प्रातः 8 बजे आचार्यश्री नगर में प्रविष्ट हुए। जनसमूह हर्षोन्मत्त हो नाचने लगा। जय-जयकार के नारों से आकाश गूँज उठा। लोग आचार्यश्री के दर्शन के लिए पीछे-पीछे दौडने लगे। जनसमूह इतना विशाल था कि लगता था मानो जनसमुद्र ही अपनी सीमाएँ तोड़ कर उमड़ पड़ा हो। भीड़ को नियंत्रित करने में पुलिस को बड़ी कठिनाई हो रही थी।

कई दिनों से उस लोकोत्तर, युगस्रष्टा महर्षि के स्वागत की तैयारियाँ चल रही थीं। जैनेतर जनता भी विद्यासागर के नाम से सुपरिचित हो चुकी थी। अतः उसमें भी उनके दर्शन की उत्कण्ठा बढ़ गई थी। वह यह देखने के लिए उत्सुक थी कि आखिर वह कौनसी विभूति है, जिसकी लोग इतनी आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे हैं ? उसमें ऐसी क्या चीज है, अन्य साधुओं से अलग कि वह इतना प्रसिद्ध हो गया है ? उसके दर्शनार्थ लोक इतने पागल हो उठे हैं ?

और जब उन्होंने विद्यासागर की छवि को देखा तो देखते ही रह गये। उन्होंने पाया कि सचमुच उनमें कुछ ऐसी चीजें है, जो अन्य साधुओं में दृष्टिगोचर नहीं होतीं। वे चीजें हैं: नग्नवेश से झलकती शिशुवत् निर्विकारता, सम्पूर्ण सुखसामग्री के परित्याग से प्रकट होने वाली इन्द्रियसुख की अनाकांक्षा और दुःखों से अनुद्विग्नता, सांसारिक चमक-दमक, ख्याति-पूजा और प्रभुत्व के प्रति अनाकर्षण, संसार से मुक्त होने की उत्कट अभीप्सा, कठोर तपश्चर्या, जीवों के प्रति असीम कारुण्य, आँखों से झाँकता ज्ञान का अद्वितीय प्रकाश, मुख पर विराजती वात्सल्यमयी स्निग्ध मुस्कान और अत्यन्त शिष्ट, शालीन हावभाव, मुखमुद्राएँ, बोलचाल और चालढाल। इन चीजों ने उनमें एक दिव्य आकर्षण, एक आध्यात्मिक सम्मोहन उत्पन्न कर दिया है।

इन लाकोत्तर गुणों से सम्मोहित हो गया भोपाल का समूचा जनसमुदाय। जैन-अजैन जनता आतुर हो उठी आचार्यश्री को निकट से देखने, उनके पास कुछ क्षण बैठने, बात करने और उनका आशीर्वाद पाने के लिए। बड़े-बड़े राजनेता वोट की राजनीति को परे रखकर, केवल आध्यात्मिक उपचार की लालसा से आचार्यश्री का शीतल, मृदु सान्निध्य पाने द्वार पर इकट्ठे होने लगे। भूतपूर्व खूँखार डाकुओं ने आचार्यश्री की शरण में आकर पूर्वकृत पापों से मुक्ति का मार्गदर्शन प्राप्त किया। जैनेतर समाज के अनेक व्यसनी युवकों ने आचार्यश्री से आजीवन मद्य-मांस के त्याग का व्रत लिया और उसकी सफलता के लिए आशीर्वाद पाया। अनेकों ने गोरक्षा के लिए गोशालाएँ स्थापित करने का संकल्प किया। बहुतों ने ब्रह्मचर्यादि व्रत ग्रहण किये, श्रावक प्रतिमाएँ धारण कीं। रामनवमी और महावीर जयंती के दिन आचार्यश्री की दो विशाल प्रवचन सभाएँ हुईं। दोनों में भारी संख्या में श्रोता उपस्थित हुए और अत्यन्त शान्तिपूर्वक आचार्यश्री के उपदेशों को हृदयंगम किया। महावीर जयन्ती की प्रवचनसभा भोपाल के प्रसिद्ध प्रांगण 'लाल परेड ग्राउण्ड' में आयोजित की गई थी। सम्पूर्ण ग्राउण्ड श्रोताओं से भरा हुआ था। मुख्यमंत्री सहित प्रदेश के अनेक मंत्री, महापौर, सांसद और केन्द्रीय मंत्री उपस्थित हुए।

आचार्यश्री ने अपने लोकोत्तर चरित्र से भोपालवासियों के हृदय पर जैन सन्तों के व्यक्तित्व की वह उत्कृष्ट छाप छोड़ी है, जिसने लोगों के हृदय में जैन धर्म और दर्शन के प्रति अनायास बहुमान उत्पन्न कर दिया

रतनचन्द्र जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् महावीर का सन्देश

25 अप्रैल 2002, महावीर जयंती के अवसर पर लाल परेड ग्राउण्ड भोपाल में किये गये प्रवचन का मुख्यांश

आचार्य श्री विद्यासागर जी

महावीर भगवान् जीवनकाल में सबको छोड़कर घर से चल गये। वे किसी स्थान पर रुके नहीं, कहीं मठाधीश नहीं हुए, कभी बँगले के लिए इन्तजार नहीं किया, कहीं कुर्सी की बात नहीं की। उन्होंने कहीं भी, कभी भी शासन-प्रशासन की चिन्ता नहीं की, किन्तु आत्मानुशासन की चिन्ता उन्होंने बहुत की। उस आत्मानुशासन का ही एकमात्र परिणाम है कि आज भी शासन और प्रशासन दोनों ही उन्हें याद करते हुए और उन्हें श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए नमन करते हैं।

महावीर भगवान् के विचार कैसे थे, इस बारे में हम कुछ विचार करें। उन जैसे विचार हमारे मन में नहीं भी आते तो उनके बारे में तो कुछ विचार हम कर सकते हैं। उनके बारे में विचार करने लग जायेंगे, तो उन जैसे हमारे विचार उज्ज्वल हो सकते हैं। इस बारे में म.प्र. शासन ने एक घोषणा की, कि महावीर भगवान् का अहिंसावर्ष एक वर्ष और बढ़ा देते हैं। यह इसलिए कि हम अहिंसाधर्म को अच्छी तरह जी सकें। इसके लिए उस आदर्श को और एक वर्ष सामने रखते हैं। यह ठीक ही है। दर्पण को एक बार देखने से एक बार दिखता है, दो बार देखने से दो बार दिखता है, बार-बार देखने से अपनी कमियाँ और देखने में आयेंगी। हम 2600 वर्ष के उपरान्त महावीर भगवान् को याद कर रहे हैं कि अहिंसा की दृष्टि से, उपकार की दृष्टि से, संस्कृति की रक्षा की दृष्टि से और मानवमात्र के विकास की दृष्टि से हमें आगे बढने की प्रेरणा मिले।

आज हम अपने स्वार्थ में इतने डूबे हुए हैं कि हमें एक दस मंजिला प्रासाद भी कम पड़ रहा है। दूसरे की कुटिया में कुछ भी नहीं है, इसके बारे में हम कुछ सोच नहीं पा रहे हैं। हमें चिन्ता हमेशा यही रहती है कि हमारी और उन्नति हो, किन्तु उन्नति की एक सीमा होनी चाहिए। हमें सोचना चाहिए कि दूसरे की छोटी कुटिया है और मैं मंजिलों पर मंजिलें बनाता जा रहा हूँ! मंजिलें जितनी ज्यादा बढ़ जायें, स्वर्ग उतने पास आ जाये, ऐसा नहीं है। कुटियावाला व्यक्ति भी स्वर्ग पहुँच सकता है, लेकिन बँगलेवाले का पक्का नहीं है, पहुँच भी सकता है और नहीं भी। क्योंकि कुटियावाले के पास सीमित इच्छाएँ हैं और बँगलेवाले के पास इच्छाएँ बहुत ज्यादा हैं और जो बहुत गहरे पहुँच गई हैं। गहरी होने के कारण उनका सम्बन्ध नीचे से भी तो जुड़ता चला जाता है। जो व्यक्ति जितना ऊपर पहुँच जाता है, उसकी जड़ों का नीचे भी उतना ही मजबूत होना अनिवार्य हो जाता है। इसलिए यदि पुण्य ऊपर की ओर बढ़ता चला जाता है, तो पाप भी पाताल की ओर बढ़ता चला जाता है। यह जो सुख सामग्री है वह बिना पाप के उत्पन्न नहीं हो सकती। इसी सिद्धान्त को बताने के लिए महावीर भगवान् का जन्म आज हुआ था 2600 वर्ष पहले। उन्होंने उपदेश दिया था कि अपने जीवनकाल में आवश्यकताओं को बढाओ नहीं और अपने आत्मानुशासन से उन्हें सीमित करो और इतना सीमित करो कि आप दिगम्बर होकर भी जी सको।

भगवान् महावीर की दिगम्बर मुद्रा को देखने से आपका विकार दूर हो जाता है। जैनधर्म की नींव भी बहुत मजबूती के साथ महावीर ने रखी थी। और उन्होंने यह अनुकरण भगवान राम का किया था। उससे पहले राम ने और तीर्थंकरों का किया था और उनसे भी पहले तीर्थंकर हुए आदिनाथ ऋषभदेव। वे युग के आदि में हुए हैं। अन्तिम तीर्थंकर महावीर हैं। चौबीस तीर्थंकरों का जीवन अपने-आप में महत्त्वपूर्ण है। तीर्थंकरों के जन्म का सौभाग्य भारतवर्ष को ही प्राप्त होता है, अन्य को नहीं। भारत-वासियो! आप लोगों को सोचना चाहिए कि यदि आप भारत को और समृद्ध बनाना चाहते हो, तो यह पैसे से नहीं, धनदौलत से नहीं, महाप्रासादों से नहीं, बल्कि अहिंसा से ही संभव है। यदि अहिंसा नहीं है जीवन में, तो यह राष्ट्र कभी भी सुरक्षित रहनेवाला नहीं है।

भगवान् के पास किंचित् मात्र भी परिग्रह नहीं था, लेकिन यदि सम्पदा की ओर दृष्टि रखते हैं, तो उनके पास जो सम्पदा थी, वह यहाँ उपस्थित एक भी व्यक्ति के पास नहीं है। यदि समग्र विश्व की सम्पदा एकत्रित की जाय, तो वह महावीर भगवान् की सम्पदा के सामने कोई मायना नहीं रखती। इसलिए उनको संसार की कोई आवश्यकता नहीं पड़ी।

भगवान् ने पाँच पापों के बारे में कहा कि ये सभी हमें पाताल की ओर ले जाते हैं। सभी लोग इन पाँचों पापों से परिचित हैं। सन्त और संसारी सभी इनसे परिचित हैं। एक बार और मैं आप लोगों को इनसे परिचित कराना चाहता हूँ। संभव है आप में से कोई इनसे अनभिज्ञ हो। हिंसा एक महान् पाप है। दूसरे के प्राणों या अपने प्राणों को क्षति पहुँचाना हिंसा है। झूठ भी एक पाप है। वह अहिंसा को समाप्त करने वाला पाप माना जाता है। चोरी यह अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए दूसरे की सम्पदा के अपहरण का पाप है। कुशील आप सब जानते हैं। पाँचवाँ पाप है परिग्रह। जैसे-जैसे परिग्रह बढ़ने लगता है, वैसे-वैसे हम भी ऊपर उठने लगते हैं, फिर कोई नीचे दिखता ही नहीं। यह सब पापों का बाप है। इसीलिए महावीर कहते हैं- सारे पाप इस परिग्रह पाप के ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कारण हुआ करते हैं, इसलिए इस एक पाप को छोड़ दो, तो बाकी सारे चार पाप अपने आप छूट जाते हैं।

पैसे को, परिग्रह को देखने से मुँह में पानी आता है,आँखों में नहीं। हाँ, आँखों में पानी तब आता है, जब हाथ से पैसा चला जाता है। जब हमारे मुँह में पानी आता है, तब हम दूसरों की सम्पदा को डकार जाते हैं और उन्हें दु:खों की आग में ढकेल देते हैं। दूसरों की आँखों का पानी हमें दिखता नहीं। भगवान् महावीर ने कहा है-जो परिग्रह स्वयं के जीवन में भी रागद्वेष का कारण है और दूसरों की जिन्दगी के लिए भी महान् दु:ख का कारण है, उसे अपने पास बहुत सीमित रखें। यह गृहस्थाश्रम में आवश्यक तो है, लेकिन इतना आवश्यक नहीं कि अपने जीवन और पराये जीवन को क्षतिग्रस्त कर दिया जाय।

महावीर भगवान् के जीवन में अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन सभी को आप देख सकते हैं। महावीर भगवान् के जीवन की एक-एक घटना को देख लो, कहीं भी परिग्रह नजर नहीं आयेगा। धन्य है वे महावीर जिन्होंने भारत में जन्म लेकर हम जैसे महान् अविवेकी, स्वार्थी, अज्ञानी जीवों को दु:खों से मुक्त होने का मार्ग दिखलाया। वे आज नहीं हैं, लेकिन उनका सन्देश जीवित है। आज देश भी उनके नाम से कुछ सुख और शान्ति का अनुभव कर रहा है। विश्व में शान्ति स्थापित करने का संकल्प यदि लिया जा सकता है, तो केवल भारतवर्ष के माध्यम से ही लिया जा सकता है, क्योंकि भारत ही अपने पूरे स्वार्थ को छोड़कर विश्वकल्याण की बात कर सकता है।

लेकिन विश्वकल्याण की बात करना और विश्वकल्याण के बारे में प्रयासरत होना, दोनों में बहुत अन्तर है। आज यहाँ पर करीब 40-50 हजार जनता एकत्रित है। इतने ग्रीष्मकाल में भी आप यहाँ पर चलते हुए आये हैं। आपके सामने मैं यह कहना चाह रहा हूँ कि अहिंसा वर्ष में एक वर्ष और बढ़ाया गया है, यह ठीक है। लेकिन वर्ष बढ़ गया है, इससे ही मैं आश्वस्त नहीं होऊँगा। (शासन ने) यह आश्वासन आप लोगों पर विश्वास रखकर दिया है। भारत के इतिहास क बारे में आप लोगों को सोचना है, और विश्व में जितने भी स्वतंत्र राष्ट्र हैं, उनके इतिहास के बारे में भी सोचना है। कौन सी History किस देश की है, जिसमें यह लिखा हो कि वहाँ की जनता ने और शासकों ने मांस का निर्यात करके देश को समृद्ध बनाया है? इतिहास में ऐसा कोई भी देश नहीं मिलेगा, किन्तु आज यह भारत ही मिल रहा है।

मांस निर्यात के लिए भारत का वह मतदाता उत्तरदायी है जो मांस निर्यात का विरोधी होते हुए भी मतदान में भाग नहीं लेता। चुनावों में हम देखते हैं कि 40 या 45 प्रतिशत अथवा अधिक से अधिक 55 या 60 प्रतिशत मतदाता ही मतदान करते हैं शेष मतदाता उदासीन रहते हैं। यदि यह वर्ग विवेकपूर्वक मतदान कर अहिंसा के समर्थक प्रतिनिधियों को जिता दे, तो निश्चितरूप, मांसनिर्यात का निकृष्ट कार्य समाप्त हो जायेगा। यह आप लोगों की Carelessness का नतीजा है। आप लोग यह न सोचें कि मेरा एक वोट क्या कर सकता है? एक-एक मिलकर ही अनेक होते हैं। यदि आप सत्य का समर्थन नहीं करते, तो यह ध्यान रखना कि आप असत्य का समर्थन करते जा रहे हैं। यदि आप सावधान नहीं हुए, तो वे ही व्यक्ति सत्ता में आयेंगे, उन्हीं के हाथ में सूत्र रहेगा, सत्ता रहेगी, जो पशुवध और मांसनिर्यात के समर्थक हैं, और उनके द्वारा पशुओं का वध होते-होते, जब पशु समाप्त हो जावेंगे, तब क्या होगा? किसका नम्बर आयेगा? वह जमाना दूर नहीं, जब मनुष्य की भी बलि दी जाने लगेगी। इसलिए आप लोगों को सोचना चाहिए और वह कदम उठाना चाहिए जिसके माध्यम से अहिंसा की संस्कृति सुरक्षित रहे और उस कदम को जो उठा रहे हैं उनका समर्थन भी करना चाहिए।

आप यह सोचिए, विचार कीजिए कि अस्ताचल पर जब सूर्य चल जाता है, तब रात का होना अनिवार्य हो जाता है। महावीर भगवान् जैसे तेजपुञ्ज सूर्य का तो यहाँ उगना बन्द हो गया है। हमारे जीवन में अब प्रकाश किससे मिलेगा? अब उनके सन्देशों के माध्यम से हम प्रकाश प्राप्त कर सकते हैं। महावीर का एक सूत्र याद रखना चाहिए 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्', आपस में एक-दूसरे का उपकार करने से ही जीवनयात्रा सम्भव होती है, एक-दूसरे का वध करने से विप्लव और विनाश ही फलित होता है। यदि हम महावीर भगवान् का सन्देश विश्व में पहुँचा दें, तो निश्चित विश्व का कल्याण होगा। मांस निर्यात यदि बन्द हो जाय, तो भारत का इतिहास जो कलंकित हो रहा है, वह उज्ज्वल बना रहेगा। पशु-आप लोगों को दुआ देंगे, और आपका जीवन जो अभी दु:खमय है वह सुखमय बन जायेगा। सुखमय बने इसी भावना के साथ अहिंसा परमधर्म की जय।

- निरीहता और निर्भीकता के बिना हम मोक्षमार्ग पर सही-सही कदम नहीं बढ़ा सकते।
- त्यागी जनों की त्यागवृत्ति देखने से रागी जनों की रागवृत्ति में कमी आती है।

'सागर बूँद समाय' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थंकर महावीर : जीवन और दर्शन

भगवान् महावीर की 2600वीं जन्म जयंती पर विशेष आलेख

मुनि श्री समतासागर जी

जिनशासन के प्रवर्त्तक चौबीस तीर्थंकर हुए हैं, जिनमें प्रथम आदिनाथ और अन्तिम महावीर स्वामी हैं। सामान्यतया लोगों को यही जानकारी है कि जैनधर्म के संस्थापक भगवान् महावीर हैं, किन्तु तथ्य यह है कि वह संस्थापक नहीं प्रर्वतक हैं। तीर्थंकर उन्हें ही कहा जाता है जो धर्म-तीर्थ के प्रवर्तक होते हैं। युग के आदि में हुए आदिनाथ ने जिनका एक नाम ऋषभनाथ भी था, धर्म तीर्थ का प्रवर्तन किया, तत्पश्चात् अजितनाथ से लेकर महावीर पर्यन्त तीर्थं प्रवर्तन की यह परम्परा अक्षुण्ण रूप से चली आई।

भगवान् महावीर का जन्म ईसा पूर्व 598 में विदेह देश स्थित (वर्तमान बिहार राज्य) वैशाली प्रान्त के कुण्डपुर नगर में चैत्र सुदी त्रयोदशी 27 मार्च, सोमवार को हुआ था। उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में चन्द्र की स्थिति होने पर अर्यमा नाम के शुभ योग में निशा के अन्तिम प्रहर में उन्होंने जन्म लिया। धरती पर जब भी किसी महापुरुष का जन्म होता है, तो वसुधा धन-धान्य से आपूरित हो जाती है। प्रकृति और प्राणियों में सुख शान्ति का संचार हो जाता है। सब तरफ आनन्द का वातावरण छा जाता है, सो महावीर के जन्म के समय भी ऐसा ही हुआ। जिस कुण्डपुर नगर में महावीर का जन्म हुआ था, वह प्राचीन भारत के व्रात्य क्षत्रियों के प्रसिद्ध वज्जिसंघ के वैशाली गणतन्त्र के अन्तर्गत था। महावीर के पिता सिद्धार्थ वहाँ के प्रधान थे। वे ज्ञातृवंशीय काश्यप गोत्रीय थे तथा माता त्रिशला उक्त वज्जिसंघ के अध्यक्ष लिच्छिविनरेश चेटक की पुत्री थीं। इन्हें प्रियकारिणी देवी के नाम से भी संबोधित किया जाता था। जीवन की विभिन्न घटनाओं को लेकर, वीर, अतिवीर, सन्मति, महावीर और वर्द्धमान ये पाँच नाम महावीर के थे। वर्द्धमान उनके बचपन का नाम था। कुण्डपुर का सारा वैभव राजकुमार वर्द्धमान की सेवा में समर्पित था। अपने माता-पिता के इकलौते लाड़ले राजकुमार को सुख-सुविधाओं में किसी भी तरह की कमी नहीं थी, किन्तु उनकी वैरागी विचारधारा को वहाँ का कोई भी आकर्षण बाँध नहीं पाया और यही कारण था कि विवाह के आने वाले समस्त प्रस्तावों को ठुकराते हुए वह 30 वर्ष की भरी जवानी में जगत और जीवन के रहस्य को जानकर साधना-पथ पर चलने के लिए संकल्पित हो गए। शाश्वत सत्य की सत्ता का साक्षात्कार करने निर्ग्रन्थ दैगम्बरी दीक्षा धारण कर उन्होंने कठिन तपश्चरण प्रारंभ कर दिया। उनकी आत्म-अनुभूति और परम वीतरागता के कर्मपटल छटते गये और एक दिन वे लोकालोक को जानने वाले सर्वज्ञ अर्हन्त पद को प्राप्त हुए। इस बोधिज्ञान (केवलज्ञान) को उन्होंने जृम्भिका ग्राम के निकट ऋजुकूला नदी के किनारे शाल्मलि वृक्ष के नीचे स्वच्छ शिला पर ध्यानस्थ हो प्राप्त किया था। तदुपरान्त राजगृह नगर के विपुलाचल पर्वत पर धर्मसभारूप समवशरण में विराजमान भगवान् का प्रथम धर्मोपदेश हुआ। मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध संघ के नायक बन लगातार 30 वर्ष तक सर्वत्र विहार कर वह अपने अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह और अकर्त्तावाद आदि सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते रहे। 72 वर्ष की आयु में पावापुर (बिहार) में कार्तिक वदी अमावस्या की प्रत्यूत बेला में ईसा पूर्व 527 (15 अक्टूबर, मंगलवार) को उन्हें परम निर्वाण प्राप्त हुआ। महावीर के निर्वाण के सम्बन्ध में कहा गया है कि एक ज्योति उठी, किन्तु कई-कई ज्योतियों ने जन्म ले लिया। एक दीये की लो ऊपर गई, किन्तु गाँव-गाँव, नगर-नगर धरती का कण-कण दीपों से जगमगा उठा। भगवान् महावीर स्वामी तो मोक्ष के वासी हुए, पर उनके द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह और अकर्त्तावाद के सिद्धांतों का प्रकाश पल-पल पर आज भी प्रासंगिक बना हुआ है।

अहिंसा - प्राणियों को नहीं मारना, उन्हें नहीं सताना। जैसे हम सुख चाहते हैं, कष्ट हमें प्रीतिकर नहीं लगता, हम मरना नहीं चाहते वैसे ही सभी प्राणी सुख चाहते हैं, कष्ट से बचते हैं और जीना चाहते हैं। हम उन्हें मारने/सताने का मन में भाव न लायें, वैसे वचन न कहें और वैसा व्यवहार/कार्य भी न करें। मनसा, वाचा, कर्मणा प्रतिपालन करने का महावीर का यही अहिंसा का सिद्धान्त है। अहिंसा,अभय और अमन चैन का वातावरण बनाती है। इस सिद्धान्त का सार सन्देश यही है कि प्राणी-प्राणी के प्राणों से हमारी संवदेना जुड़े और जीवन उन सबके प्रति सहायी/सहयोगी बने। आज जब हम वर्तमान परिवेश या परिस्थिति पर विचार करते हैं, तो लगता है कि जीवन में निरन्तर अहिंसा का अवमूल्यन होता जा रहा है। व्यक्ति, समाज और राष्ट्र बात अहिंसा की करते हैं, किन्तु तैयारियाँ युद्ध की करते हैं। आज सारा विश्व एक बारूद के ढेर पर खड़ा है। अपने वैज्ञानिक ज्ञान के द्वारा हमने इतनी अधिक अणु-परमाणु की ऊर्जा और शस्त्र विकसित कर लिए हैं कि तनिक सी असावधानी, वैमनस्य या दुर्बुद्धि से कभी भी विनाशकारी भयावह स्थिति बन सकती है। ऐसे नाजुक संवेदनशील दौर को हमें थामने की जरूरत है। **हथियार की विजय पर विश्वास नहीं, हृदय की विजय पर विश्वास आना चाहिए। तोप, तलवार से झुका हुआ इंसान एक दिन ताकत अर्जित कर पुनः खड़ा हो जाता है किन्तु प्रेम, करुणा और अहिंसा से वश में किया गया इंसान सदा-सदा के लिए हृदय से जुड़ जाता है।** मेरी अवधारणा तो यही है कि अहिंसा का व्रत जितना प्रासंगिक महावीर के समय में था उतना ही और उससे कहीं अधिक प्रासंगिक आज भी है। कलिंग युद्ध में हुए नरसंहार को देखकर सम्राट अशोक का दिल दहल गया और फिर उसने जीवन में कभी भी तलवार नहीं उठाई। तलवार की ताकत के बिना ही उसने अहिंसक शासन का विस्तार किया। रक्तपात से नहीं रक्तसम्मान से उसने अपने शासन का समृद्ध किया। इसलिए व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की शान्ति/समृद्धि के लिए भगवान् महावीर द्वारा दिया गया "जियो और जीने दो" का नारा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और मूल्यवान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेकान्त : भगवान् महावीर का दूसरा सिद्धान्त अनेकान्त का है। अनेकान्त का अर्थ है- सहअस्तित्त्व, सहिष्णुता, अनाग्रह की स्थिति। इसे ऐसा समझ सकते हैं कि वस्तु और व्यक्ति, विविध धर्मी है। जिसका सोच, चिंतन, व्यवहार और बर्ताव अन्यान्य दृष्टियों से भिन्न-भिन्न है। अब वह यदि एकांगी/एकांती विचार/व्यवहार के पक्ष पर अड़कर रह जाता है तो संघर्ष/टकराव की स्थिति बनती है। अनेकान्त का सिद्धान्त ऐसी ही विषम परिस्थितियों में समाधान देने वाला है। यह वह सिद्धान्त है जो वस्तु और व्यक्ति के कथन/पहलू को विभिन्न दृष्टियों से समझता है और उसकी सार्वभौमिक सर्वांगीण सत्ता के अस्तित्त्व को स्वीकार करता है। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में साफ-साफ बात यह है कि एकान्त की भाषा 'ही' की भाषा है, रावण का व्यवहार है, जबकि अनेकान्त की भाषा 'भी' की भाषा है, राम का व्यवहार है। राम ने रावण के अस्तित्व को कभी नहीं नकारा, किन्तु रावण राम के अस्तित्व को स्वीकारने कभी तैयार ही नहीं। यही विचार और व्यवहार संघर्ष का जनक है, जिसका परिणाम विध्वंस/विनाश है। 'ही' अहंकार का प्रतीक है। ''मै ही हूँ'' यह उसकी भाषा है, जो कि संघर्ष और असद्भाव का मार्ग है। अनेकान्त में विनम्रता/सद्भाव है, जिसकी भाषा 'भी' है। 'ही' का परिणाम 36 के रूप में निकलता है, जिसमें तीन छह की तरफ और छह तीन की तरफ नहीं देखता किन्तु 'भी' का परिणाम 63 क रूप में आता है जिसमें छह तीन और तीन छह क गले से लगता है। यही 63 का सम्बन्ध विश्वमैत्री, विश्वबन्धुता, सौहार्द, सहिष्णुता, सहअस्तित्व और अनाग्रह रूप अनेकान्त का सिद्धान्त है। यही अनेकान्त की दृष्टि दुनिया के भीतर बाहर के तमाम संघर्षों को टाल सकती है। युग के आदि में आदिनाथ के पुत्र भरत और बाहुबली के बीच वैचारिक टकराहट हुई, फिर युद्ध की तैयारियाँ होने लगीं। मन्त्रियों की आपसी सूझबूझ से उसे टाल दिया गया और निर्धारित दृष्टि, जल और मल्लयुद्ध के रूप में दोनों भ्राता अहिंसक संग्राम में सामने आये। यह दो व्यक्तियों की लड़ाई थी। फिर राम-रावण का काल आया जिसमें दो व्यक्तियों के कारण दो सेनाओं में युद्ध हुआ, जिसमें हथियारों का प्रयोग हुआ। हम और आगे बढ़े, महाभारत के काल में आये, जिसमें एक ही कुटुम्ब के दो पक्षों में युद्ध हुआ और अब दो देशों में युद्ध होता है। पहले भाई का भाई से, फिर व्यक्ति का व्यक्ति से, फिर एक पक्ष का दूसरे पक्ष से और अब एक देश का दूसरे देश से युद्ध चल रहा है और युद्ध का परिणाम सदैव विध्वंस ही निकलता है। **'हमें संघर्ष नहीं शांति चाहिए' और यदि सचमुच ही हमने यही ध्येय बनाया है तो अनेकांत का सिद्धान्त, 'भी' की भाषा,अनाग्रही व्यवहार को जीवन में अपनाना होगा।**

अपरिग्रह - भगवान् महावीर का तीसरा सिद्धान्त अपरिग्रह का है। परिग्रह अर्थात् संग्रह। यह संग्रह मोह का परिणाम है। जो हमारे जीवन को सब तरफ से घेर लेता है,जकड़ लेता है, परवश/पराधीन बना देता है, वह है परिग्रह। धन पैसा को आदि लेकर प्राणी के काम में आनेवाली तमाम सामग्री परिग्रह की कोटि में आती हैं। ये वस्तुएँ हमारे जीवन को आकुल-व्याकुल और भारी बनाती हैं। एक तरह से परिग्रह वजन ही है और वजन हमेशा नीचे की ओर जाता है। तराजू का वह पलड़ा जिस पर वजन ज्यादा हो वह स्वभाव से ही नीचे की ओर जाता है। ठीक इसी तरह से यह परिग्रह मानव जीवन को दुःखी करता है, संसार में डुबोता है। **भगवान् महावीर ने कहा या तो परिग्रह का पूर्णतः त्याग कर तपश्चरण के मार्ग को अपनाओ अथवा पूर्णतः त्याग नहीं कर सकते, तो कम से कम आवश्यक सामग्री का ही संग्रह करो। अनावश्यक, अनुपयोगी सामग्री का तो त्याग कर ही देना चाहिए। आवश्यक में भी सीमा दर सीमा कम कर करते जायें यही 'अपरिग्रह' का आचरण है, जो हमें निरापद, निराकुल और उन्नत बनाता है।**

अकर्त्तावाद - भगवान् महावीर द्वारा प्रतिपादित एक सिद्धांत 'अकर्त्तावाद' का है। अकर्त्तावाद का अर्थ है ''किसी ईश्वरीय शक्ति/सत्ता से सृष्टि का संचालन नहीं मानना।'' ईश्वर की प्रभुता/सत्ता तो मानना पर कर्त्तावाद के रूप में नहीं। भगवान् कृतकृत्य हो गये हैं, इसलिए अब वह किसी तरह के कर्तृत्व में नहीं है। कण-कण और क्षण-क्षण की परिणति स्वतंत्र/स्वाधीन है। प्रत्येक जीव अपने द्वारा किये हुए कर्मों का ही फल भोगता है। उसके शुभ कर्म उसे उन्नत और सुखी बनाते हैं जबकि अशुभ कर्म अवनत और दुःखी बनाते हैं। दोजख और जन्नत का पाना प्राणी के द्वारा उपार्जित अच्छे बुरे कर्मों का फल है। इसे किसी अन्य के कारण नहीं अपने कर्म के कारण ही पाते हैं। यही अवधारणा अकर्त्तावाद का सिद्धांत है। कहा भी गया है-

कोऊ न काऊ सुख दुःख करि दाता,
निज कृत कर्म भोग फल भ्राता।
कर्मप्रधान विश्व करि राखा,
जो जस करे सो तस फल चाखा॥

यह सिद्धांत इसलिए भी प्रासंगिक है कि हमें अपने किए गए कर्म पर विश्वास हो और उसका फल धैर्य, समता के साथ सहन करें। वस्तु का परिणमन स्वतंत्र/स्वाधीन है। मन में कर्त्तृत्व का अहंकार न आये और न ही किसी पर कर्त्तृत्व का आरोप हो, इस वस्तु-व्यवस्था को समझकर शुभाशुभ कर्मों की परिणति से पार हो, आत्मा की शुद्ध दशा प्राप्त करें। बस यही धर्म चतुष्टय भगवान् महावीर स्वामी के सिद्धांतों का सार है। वैसे अहिंसा, अमृषा, अचौर्य, अकाम और अपरिग्रह रूप पंच सूत्र महावीर के प्रमुख सिद्धांत हैं। **व्यक्ति जन्म से नहीं, कर्म से महान बनता है,** यह उद्घोष भी महावीर की चिन्तनधारा को व्यापक बनाता है। इसका आशय यह है कि प्रत्येक व्यक्ति मानव से महामानव, कंकर से शंकर, भील से भगवान् बन सकता है। नर से नारायण और निरंजन बनने की कहानी ही महावीर का जीवन-दर्शन है, और यही इस जयंती पर्व का पावन संदेश है। भगवान् महावीर की 2600वीं जन्म जयंती के पावन पर्व पर प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि धरती रक्तरंजित नहीं, सदा सर्वदा 'शस्य श्यामला' हरी-भरी हो। प्राणि-प्राणि के प्राणों में करुणा का संचार हो। सब तरफ अभय और आनंद का वातावरण बने। हिंसा, आतंक और अनैतिकता खत्म हो। 'जियो और जीन दो' का अमृत-संदेश सभी आत्माओं को प्राप्त हो। सौहार्द, शांति और सद्भावना हम सबके अन्दर विकसित हो, बस यही कामना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जन्मतिथि पर महावीर की

मुनि श्री समतासागर जी

विकल विश्व की इस धरती ने फिर से तुम्हें पुकारा है।
जन्मतिथि पर महावीर की गूँज रहा जयकारा है ॥

शोषित थी मानव समाज, थी अन्ध-कुरीति फैली ।
धर्म नाम पर पशुबलि से, थी धरा रक्त रंजित मैली॥
सिहर उठे थे आप देखकर यह हिंसा का नर्तन।
करूँ दूर यह सब कैसे बस करने लगे आप चिन्तन ॥
धर्म अहिंसा पथ दिखलाकर दिया नया उजियारा है।
जन्म तिथि .....

फूटी विराग की किरण आप में उम्र तीस की पाकर।
रहे खोजते बारह वर्षों तक निज को, निज में आकर।
पाकर के कैवल्य आप अर्हन्त महाप्रभु आप्त हुये ।
पावापुर में ध्यान लगा फिर अंतिम शिवपद प्राप्त किये॥
कठिन साधना, त्याग, दिगम्बर चर्या, असिव्रत धारा है।
जन्म तिथि .....

सार्वभौम, समभाव, समन्वय, सर्वोदय शासन प्यारा ।
हर आतम परमातम बन सकती, स्वाधीन जगत सारा ॥
विश्वबंधुता, अनेकान्त सिद्धांत, सूत्रव्रत पाँच महान ।
दिये आपने, जो अपनाते, वे पाते सुख शांति निधान॥
मैं भूला सारे मत पथ, पथ जब से मिला तुम्हारा है।
जन्म तिथि .....

आज मनुजता सिसक रही है इकतरफा कोने में।
न्याय नीतियाँ जकड़ रही हैं चाँदी में सोने में ॥
करुणा काँप रही है थर-थर पतझड़ के पत्तों सी ।
कैसा युग आया है आई अब मनहूस घड़ी कैसी ॥
मानवता के बनो मसीहा फिर लेकर अवतारा है।
जन्म तिथि .....

विश्व खड़ा वैभव लेकर के अब विनाश के तट पर।
प्रश्न चिह्न है लगा शान्ति का इस विकसित संकट पर॥
प्राण प्यासे सभी चाहते कोइ दूत यहाँ आये ।
महावीर सा इस धरती पर कोई पूत जन्म पाये ॥
सम्हल जायगा विश्व, तुम्हें पाकर विश्वास हमारा है ।
जन्म तिथि.....

ऐसे में बस एक दीप तू ही बस एक सहारा है ।
आज पुनः इस जन्मतिथि पर सबने तुम्हें पुकारा है॥
हटे तिमिर, फैले प्रकाश, 'समता' का दीप जला देना।
सुरभित हो मानव समाज इक ऐसा पुष्प खिला देना ॥
'जियो और जीने दो' का गूँजे धरती पर नारा है ।
जन्म तिथि.....

गीत

डॉ. दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

मत अहम् में डूब रे मन
सत्य को पहचान।

तुंग भवनों को बना भी
कब सुरक्षित व्यक्ति,
नष्टता अव्यक्त अपनी
मधुमती अभिव्यक्ति;

दैव को विज्ञान भी अब
तक न पाया जान।
मत अहम् में डूब रे मन
सत्य को पहचान।

हव्य तक को तू बनाकर
ऐंठता निज द्रव्य,
सत्य शिव सुन्दर बने क्यों
फिर कहीं भवितव्य।

दुःख का कारण जगत में
मोह का सन्धान।
मत अहम् में डूब रे मन
सत्य को पहचान।

मार्ग है बस एक ही
अध्यात्म की जय बोल,
बंद जो है तीसरी वह
आँख अपनी खोल;

रोक कब भव भूति पाई
सृष्टि का अवसान।
मत अहम् में डूब रे मन
सत्य को पहचान।

228-बी, सिविल लाइन्स, कोटा-324001 (राज.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् महावीर की प्रासंगिकता

प्राचार्य निहालचंद्र जैन

युग पुरुष /तीर्थंकर कालातीत होते हैं। कैवल्य का दिव्य अवदान उन्हें अमरता की सौगात दे जाता है। वे समय की धारा में विलीन नहीं होते हैं। जब भीतर आलोकित हो जाता है, तो बाहर के कुहासे/अंधकार मिट जाते हैं। अंधकार तो अज्ञान और मोह का होता है, भगवान् महावीर के भीतर से मोह और अज्ञान का अंधेरा समाप्त हो जाने से वे सर्वकालिक बन गये।

भगवान् महावीर की पहचान बाहरी वैभव या चमत्कार से नहीं जुड़ी है। वे सर्वदेशिक व सर्वकालिक इसलिए हो गये कि वे अपनी आत्मवृत्तियों से युद्ध कर और अन्तः कषायों को परास्त कर विजयी बने। इस आत्म-देवत्व के कारण वे महावीर कहलाये। किसी बाहरी युद्ध की विजय से नहीं, आत्म-विजय के कारण जन्म-जयन्ती (जन्मकल्याणक) 2600 वर्षों से पूज्य भाव व श्रद्धा से मनती आ रही है। मानवीय मूल्य कभी पुराने नहीं पड़ते। महावीर की दिव्य-देशना, मानवीय मूल्यों के संरक्षण /संबर्धन के लिए भारत वसुन्धरा पर हुई थी, जिनकी देशना में 1.समता 2.सहिष्णुता 3. सहअस्तित्व 4.संयम और 5. स्वतंत्रता के पंचशील-सूत्र उद्भासित हुए थे, जो सर्वदेशिक /सर्वकालिक बने। वे आज भी उतने ही सामयिक और प्रासंगिक हैं, जितने उस समय थे जब दिव्य ध्वनि से अवतरित हुए थे।

समता - यह प्रकृति का अवदान है। इसलिए महावीर सा नैसर्गिक पुरुष दूसरा खोज पाना मुश्किल है। उनमें आकाश सी निरवलम्बता और तरुवर सी नैसर्गिकता थी। जैसे प्रकृति ने उन्हें अवतरित किया हो। आवरण उन्हें स्वीकार ही नहीं रहा। उनका दिगम्बरत्व/वीतरागत्व प्रकृति की हकीकत थी। जैसे प्रकृति में छिपाने को कुछ नहीं है, वैसे महावीर निरभ्र थे।

भगवान् महावीर की खोज अनिन्द्रिय-मूलक थी, इन्द्रिय जनित नहीं। इन्द्रियों का संबंध बाहर से है, पदार्थों से है और विज्ञान की सारी खोज-पदार्थों से जुड़ी है। विज्ञान शरीर और मन से लेकर भूत तत्त्वों तक फैला है, जबकि अनिन्द्रिय की खोज "वीतराग-विज्ञान" पर टिकी है। वह अध्यात्म की यात्रा है। वह आत्मानुसंधान है।

वीतराग विज्ञान के हिमालय से समता की पावन-गंगा अवतरित होती है। उस गंगा को बुलाने के लिए आत्म-पुरुषार्थ का भागीरथ चाहिए।

जीवन-मृत्यु में, जय-पराजय में, सुख-दुख में, प्रशंसा और निन्दा में समताशील बने रहना, यह वीतरागविज्ञान का करिश्मा हो सकता है। संसारी सुवर्ण एवं मृतिका को समभाव से कैसे देख सकता है ?

समता जीव की मौलिकता है, उसकी प्रकृति है, जबकि विषमता उसकी विकृति है। महावीर का दिव्य संदेश विषमता से बचने का रहा।

समता की पावन गंगा के दो कूल हैं- 1. सहिष्णुता, 2. सह अस्तित्व

दिगम्बरत्व की कल्पना सहिष्णु बने बिना नहीं की जा सकती। आकाश की ओढ़न और पृथ्वी की बिछावन, आकाश-सा हृदय और पृथ्वी सी क्षमा, जब जीवन की परिभाषा बन जाये, तो दिगम्बरत्व की पहचान प्रकट होती है।

साधना चाहे अणुव्रत पालन की हो या महाव्रत के अनुशीलन की, सहिष्णुता के पाँव बिना, वह लँगड़ी है। अनुशासन बाहरी हो या भीतरी, सहिष्णुता उसकी प्राथमिक शर्त है। इसके बिना स्वतंत्रता उच्छृङ्खल है। उपसर्ग सहिष्णुता के मित्र बन जाते हैं। श्रमण साधना में बाईस परिषह कहे गये। सहिष्णुता की ढाल से परिषहों का आक्रमण झेला जा सकता है।

समता की फसल में सहिष्णुता पैदा होती है। विवेक से सहिष्णुता को बल मिलता है और सहिष्णुता से सहअस्तित्व की अवधारणा का विकास होता है।

सह अस्तित्व - सहअस्तित्व के गर्भ में अनाग्रह के बीज छिपे होते हैं। वस्तुतः संघर्ष का जनक हमारी आग्रहवृत्ति है। आग्रहवृत्ति सत् असत् और हेय-उपोदय को नहीं, स्वार्थ को देखती है। आग्रहवृत्ति से मिथ्यात्व को बल मिलता है और जहाँ मिथ्यात्व है, वहाँ अविवेक है। अविवेक संघर्ष और युद्ध रचता है।

'महाभारत' अविवेक का संग्राम था, जो आग्रह की भूमि पर लड़ा गया था।

भगवान् महावीर ने स्याद्वाद और अनेकान्त के आलोक में सहअस्तित्व को प्राण दिये। आचरण में रूपायित हुआ अनेकान्त-सहअस्तित्व की अनुकंपा से।

सह अस्तित्व के आँगन में "परस्परोपग्रहो जीवानाम्" का अमर सूत्र पुष्प बनकर फूला-फला। प्रत्येक प्राणी सापेक्षता और सह अस्तित्व से जुड़ा है। एक का उपकार दूसरे को उपकृत कर रहा है। इसके बिना न जीवन संभव है और न जीवन का विकास।

प्रकृति में अकारण कुछ नहीं है भले ही हमारी अज्ञानता उसमें प्रयोजन न ढूँढ पाये। वृक्ष हमसे साँसे ले रहा और हम वृक्षों के कारण प्राणवायु पा रहे हैं। मनुष्य मनुष्य से ही नहीं वृक्षों तक से जुड़ा है। लेकिन हमारा अहंकार हमें तोड़ता है। अहंकार समस्याएँ पैदा करता है। सहअस्तित्व आदमी को आदमी से ही नहीं, वरन चराचर से जोड़ता है। यह समस्याओं का निरसन कर विश्व शान्ति की स्थापना में अहम् भूमिका निभाता है।

संयम- मनुष्य के पास 'ज्ञान' का अनंत भण्डार है। उसकी पकड़ में सब कुछ कैद हो रहा है, केवल वह स्वयं को नहीं पकड़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पा रहा है। स्वयं को नहीं खोज पा रहा है।

महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन मृत्यु-शैय्या पर थे। एक पत्रकार ने उनसे अंतिम इच्छा जाननी चाही कि मरने के बाद दूसरे जन्म में आप क्या होना चाहेंगे ?

आइन्स्टीन ने कहा - "कुछ भी हो जाऊँ, पर एक वैज्ञानिक नहीं।"

जिसने सारी जिन्दगी विज्ञान के लिए समर्पित की हो, उसके मन में विज्ञान के प्रति इतना अफसोस। आइन्स्टीन ने कहा- ''सुबह 10 बजे डॉक्टरों ने जबाब दे दिया कि तुम चौबीस घण्टे से ज्यादा नहीं जी सकोगे। मैंने सैकड़ों आविष्कार किये, मगर उस तत्त्व की खोज करने का कभी प्रयास नहीं किया, जिसके कारण मैं अब तक जीवित हूँ , जिसके निकल जाने के बाद आइन्स्टीन, आइन्स्टीन नहीं मात्र माटी का पुतला रह जायेगा। सबको जाना पर उस 'एक' से अनजाना रहा। उसकी खोज नहीं कर पाया।''

सही है, जिसे पाना है, जो होना है, वह तुम्हारे भीतर ही है। संयम से उस होने को प्रगट किया जा सकता है। संयम जीवन की बुनियाद है। लेकिन नियम, व्रत, संयम, चारित्र ये सब प्रवचन की वस्तुएँ बन गयी हैं। इन पर सेमिनार आयोजित होने लगे हैं।

जीवन से सम्यक्चारित्र कट गया है। इसलिए आज अध्यात्म घुटने टेक कर विज्ञान का दास बन गया है। खोटीवृत्तियों/ कृतियों के कारण उसका ज्ञान चारों खाने चित्त है।

चारित्र के नाम पर आदमी छद्मी बन गया है। वह मंदिर में आत्म-चेतना के सरोवर में तैरता है, परन्तु बाहर निकलते ही शरीर की सेवा में लग जाता है। जो आत्म-बोध उसने मंदिर में अर्जित किया था, देहरी पार करते ही संसारार्पण कर देता है। इसीलिए चारित्र का फूल मुरझाया हुआ है। इसमें न ताजगी है और न ही सुरभि। जीवन में पूज्यता आती है सम्यक्चारित्र और संयमाचरण से।

"वीतराग विज्ञान" अद्भुत शब्द है, महावीर की दिव्य-ध्वनि से निकला हुआ। वीतरागता एक सिद्धान्त (Theory)/दर्शन हो सकती है, परन्तु उसके साथ विज्ञान जुड़ जाने से उसमें क्रियात्मकता/ प्रयोग (Experiment) जुड़ गया। जीवन में वीतराग भाव झलकने लगे, जैसे दर्पण में प्रतिबिम्ब, तब वह वीतराग विज्ञान बन जाता है।

संयम आचरण से जुड़ा व्यावहारिक तत्त्व है, जो श्रम/ पुरुषार्थ से पाया जाता है। श्रमण वही, जो संयम की परिपूर्णता हासिल करे। महावीर की देशना थी कि चारित्र/ संयम की पूर्णता के बिना निर्वाण-सुख नहीं मिल सकता।

संयम के अनुशीलन से कर्मों की पराधीनता कट सकती है, कटती है और आत्मा अपनी मौलिकता में लौटता है।

स्वतंत्रता - मनुष्य अपनी वासना के कारण परतंत्र/पराधीन है। अपनी कामनाओं का गुलाम है। उसकी अनंत इच्छाओं/ अभिलाषाओं के चक्रव्यूह ने आत्मा की स्वतंत्रता को ओझल बना दिया है। वह परंतत्र नहीं होना चाहता, परन्तु दूसरों का स्वामी बनकर उसे परतंत्र बनाये रखने में रस लेता है। यही उसकी स्वतंत्रता को बाधित किये है।

भगवान् महावीर ने 'परतंत्रता की बेड़ी'/अदृश्य जंजीरें काटने के लिए पहले मोह को विसर्जित करने की बात कही। मोह दुख का जनक है। जहाँ मोह है वहाँ वह परवश है। मोह कैसे दूर हो ? महावीर ने सूत्र कहा-"संसार के प्रति जितना कर्ता और भोक्ता बनोगे, कर्मों का बंधन उतना ही जकड़ेगा और मोह के व्यामोह से विरत नहीं हो सकोगे। उसके विपरीत जितना ज्ञाता और द्रष्टाभाव अपने अंदर संसार के प्रति पैदा करोगे, उतनी निरासक्ति होगी, अस्पर्श भाव होगा और कर्म बंधन की परवशता से उन्मुक्त होगे।

मनुष्य शरीर का दास बनकर रह गया। देह सौन्दर्य में आत्मसौन्दर्य भूल गया। देह/इन्द्रियाँ क्षरणशील हैं, इसलिए इनका सौन्दर्य भी क्षरणधर्मा है। आत्मा अक्षर है, अत: आत्म-सौन्दर्य शाश्वत है।

जब तक इन्द्रियों की वासना से ऊपर नहीं उठेंगे, स्वतंत्रता कोसों दूर खड़ी रहेगी। अत: मौलिकता में लौटने का सूत्र है आत्म-स्वातंत्र्य का अवबोध। वासनाएँ हमारी परतंत्रता का ताना-बाना बुनती हैं। इस जाल से छुटकारा पाये बिना 'स्वतंत्रता' आकाश कुसुम है।

विश्व की बेहताशा बढ़ रही हिंसा व क्रूरता, अशान्ति व आतंकवाद, युद्ध व संघर्ष की विभीषिका ने अहिंसा के मसीहा-महावीर को ज्यादा प्रासंगिक बना दिया है। अहिंसा की मशाल से ही हिंसा का तमस/अंधकार दूर होगा।

विश्व की ज्वलन्त समस्याओं को हल करने के लिए महावीर की अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकान्त आज ज्यादा महत्त्वपूर्ण बन गये हैं। आणविक हथियारों की प्रतिस्पर्धात्मक दौड़ में महावीर की देशना, ठहरने का शुभ संकेत दे रही है। कह रही है रुको और रोको इन आणविक अस्त्रों के बढ़ते भण्डारों को, तभी विश्वशान्ति की वार्ताएँ सार्थक हो सकती हैं।

कत्लखानों के बाहरी अहातों में मूक पशुओं का जमाव देखकर महावीर की अहिंसा बिलखने लगी है। एक दर्द भरा प्रश्न इन पशुओं की ओर से महावीर पूछ रहे हैं राजनीति की सत्ता पर बैठे मनुष्यों से कि क्या इन्हें जीने का अधिकार नहीं है ? यह प्रश्न अनुत्तरित है।

भोगवाद की संस्कृति में, लिप्सा और अराजकता के इस बदलते परिवेष और पर्यावरण में महावीर ज्यादा प्रासंगिक बन गये हैं। महावीर को पाने की प्यास मनुष्यता का तकाजा है। विवेक/ प्रज्ञा की आँख खोले तो महावीर को सामने खड़ा पायेंगे और यदि संवेदना की /विवेक की आँख बंद कर ली तो सच मानिये, खड़े हुए महावीर भी खो जायेंगे। महावीर को खोजें और जियें अपने जीवन में।

शा.उ.मा.वि.क्र.-3 के सामने
बीना (म.प्र.) 470113

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैनागिरि : एक झलक

सुरेश जैन, आई.ए.एस.

लेखक 30 वर्षों से इस क्षेत्र के न्यासी तथा वर्तमान में उपाध्यक्ष हैं और तन, मन एवं धन से क्षेत्र के चतुर्मुखी विकास में संलग्न हैं। इस क्षेत्र के संरक्षण एवं संवर्धन में उनके परिवार का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। क्षेत्र के संबंध में उनका यह आलेख ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं प्रामाणिक जानकारी से परिपूर्ण है।

समायातो यत्र त्रिभुवनपतिः पार्श्वजिनपो,
प्रयाता निर्वाणं हतविधिचयाः यत्र मुनयः ।
महाशृङ्गोत्तुङ्गा जिनपतिगृहा यत्र लसिताः
नमामो रेशन्दीगिरिमघविघाताय खलु तम्॥

भारत वसुन्धरा की बुन्देलभूमि, जहाँ वीरता की गाथाओं से ओतप्रोत है, वहीं अपने अंचल में त्याग से ऐसे प्रकाशपुञ्ज को छिपाये हुए हैं, जिनके अवलोकन मात्र से ही मानव अपने जीवन का चरम पुरुषार्थ -मोक्ष प्राप्त करने में सफल होता है। इस विश्व का एक पक्ष राग के जीवन से परिपूर्ण है, वहीं दूसरा पक्ष मानव को वैराग्य संदेश देकर, मानवीय जीवन को चरम परिणति रूप वेदिका पर प्रतिष्ठित कर देता है। इस द्वितीय पक्ष को उद्घाटित करने वाले हैं ये क्षेत्रराज-नैनागिरि (रेशंदीगिरि), द्रोणगिरी, पपौरा, अहार, खजुराहो, देवगढ़ आदि, जिनकी रजकण थकी-हारी मानवता को चिर नवीन संदेश देकर आह्लादित करती है। विश्व की सभी संस्कृतियाँ विशिष्ट क्षेत्रों को उनकी प्राकृतिक सुषमा, जलवायु तथा अन्य सामाजिक, धार्मिक कारणों से मानवता के विकास में योगदान हेतु उत्कृष्ट मानती हैं। इसी संदर्भ में धर्म, दर्शन तथा अध्यात्म की विशाल आधारभूमि एवं मानवीय जीवन में देवत्व को प्रतिष्ठित करने वाली भारतीय संस्कृति में तीर्थों का स्थान अत्यंत पवित्र एवं गौरवपूर्ण है। श्री सिद्धक्षेत्र नैनागिरि भारतीय जैनसंस्कृति-गगन का प्रकाशवान नक्षत्र है। यह संस्कृति और अध्यात्म का वह पुण्यस्थल है, जहाँ साधकों की निवृत्तिमार्गी साधना थकी-हारी मानवता को एक नया जीवन दर्शन देकर, आह्लादित करती है। यह क्षेत्र अध्यात्ममूलक 'श्रमण संस्कृति' का वह उन्नत प्रतीक है, जहाँ मानव किसी बंद कमरे से निकलकर खुली हवा का आनंद लेता है।

नामकरण

गहरवार तथा परिहार राजपूतों का शासन समाप्त होने पर बुन्देलखण्ड क्षेत्र में नवीं शताब्दी के प्रारंभ में सनिका या ननुका ने चंदेल राज्य स्थापित किया और यह प्रतीत होता है कि नैनागिरि का पूर्व नाम इसी चंदेलवंशी राजा ननुका या ननिका द्वारा निर्मित गढ़ के कारण ननुकागढ़, ननिकागढ़ या नैनागढ़ था।

भौगोलिक स्थिति

यह ग्राम प्राचीन पन्ना राज्यान्तर्गत बक्स्वाहा परगने में एवं आधुनिक छतरपुर जिले के दक्षिण में अवस्थित है। इस ग्राम के समीप ही दमोह तथा सागर जिले की सीमाएँ मिलती हैं। यह सागर-कानपुर रोड पर दलपतपुर ग्राम से पूर्व की ओर 12 कि.मी. की दूरी पर एवं दमोह-छतरपुर रोड पर बक्स्वाहा नगर से 25 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। सघन वृक्षों, पर्वतमाला और सरोवर के मध्य एक विस्तृत परकोटे के घेरे में विविध शैलियों के प्राचीन गगनचुम्बी मेरु, मानस्तम्भ तथा उन्नत शिखर मंदिरों से शोभायमान यह क्षेत्र अपनी कलाकृति से निराला ही है। इस क्षेत्र (सम्पूर्ण ग्राम) की प्रदक्षिणा करते हुए चतुर्दिक निर्मल जल युक्त नाले तथा नदियाँ हैं, जिन्हें प्रकृति ने आगन्तुक महानुभावों के स्वागत में पाद-प्रक्षालनार्थ एवं मार्गजन्य थकावट निवारणार्थ निर्मित किया है।

इतिहास के परिप्रेक्ष्य में

प्रत्येक तीर्थस्थल अपने में कुछ ऐतिहासिक विशेषताएँ समेटे हुए होता है। तीर्थस्थलों में महान आत्माओं का इतिहास छिपा होता है, जिनके नाम का स्मरण मात्र ही सुख शांतिवर्धक होता है। इस पावन क्षेत्र का इतिहास बहुत कुछ विलुप्त है, तथापि यत् किञ्चित जानकारी हमें प्राप्त होती हैं, वह यहाँ प्रस्तुत है-

आज से करीब 2750 वर्ष पूर्व इस भूमि पर तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का समवशरण रचा गया था। उनकी पदरज से पवित्र होकर यह स्थान पुण्य तीर्थस्थल बन गया। तपोनिधि वरदत्तादि (वरदत्त, गुणदत्त, इन्द्रदत्त, मुनीन्द्रदत्त, सायरदत्त) ऋषिवरों ने अपने घोर तपश्चरण द्वारा मुक्ति लक्ष्मी प्राप्त कर इस भूमि को सिद्धभूमि बना दिया है। प्राकृत निर्वाणकाण्ड की निम्न पंक्ति द्वय इसे प्रमाणित करती हैं-

पासस्य समवसरणे, सहिया वरदत्तादि मुणिवरा पंच।
रेसन्दीगिरिसिहरे, णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥

ऐतिहासिक दृष्टि से ज्ञात होता है कि परमार शासकों के शासनकाल (9वीं से 11वीं शताब्दी) में यह ग्राम नगर रहा होगा किन्तु कालान्तर में मुसलमानों के आक्रमण के कारण इसका सांस्कृतिक वैभव समाप्त हो गया। इस क्षेत्र राज रेशंदीगिरिजी पर परम शांतिमय वातावरण के बीच अनेक प्राणियों ने निरंतर आत्म कल्याण किया होगा, किन्तु कालान्तर में परिवर्तन चक्र के बीच विस्मरण का आवरण इसके ऊपर भी पड़े बिना न रहा और यह क्षेत्र हजारों वर्षों के लिए पृथ्वी की परतों में सो गया। आज से करीब 300 वर्ष पूर्व बम्हौरी (छतरपुर) निवासी श्री श्यामले जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को स्वप्न देकर यह क्षेत्र प्रकाश में आया। खुदाई के फलस्वरूप स्वप्न में दिखा हुआ मंदिर वन्य झाड़ियों के नीचे से निकल पड़ा। यह मंदिर पूर्णत: प्रस्तर निर्मित था। इस मंदिर में देशी पाषाण की अनेक अत्यंत प्राचीन प्रतिमाएँ प्राप्त हुईं, जिनमें खजुराहो की स्पष्ट झलक मिलती है। ये प्रतिमाएँ उसी मंदिर (नम्बर 6) में दीवालों में लगा दी गई हैं। इन्हीं प्रतिमाओं के साथ एक शिलालेख भी प्राप्त हुआ था, जिसमें उल्लेख है कि यह मंदिर विक्रम संवत् 1109 में चैत्रमास में गोलापूर्व पतरिया गोत्रीय द्वारा निर्मित एवं प्रतिष्ठित है। एक अन्य शिलालेख भी नीचे के मंदिर नम्बर 14 की बाहर वाली दीवाल में लगा हुआ है। इन दोनों शिलालेखों का शुद्ध अध्ययन पुरातत्त्ववेत्ताओं द्वारा किया जाना आवश्यक है।

कुछ वर्ष पूर्व पहाड़ पर किञ्चित् खुदाई की गई थी, जिसमें चन्देल काल की शिल्पकला के पत्थर एवं मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए थे, किन्तु किसी कारण से खुदाई बंद कर दी गई। यह ज्ञात होता है कि पर्वतीय मंदिरों के पीछे पहिले बहुत बड़ा नगर बसा हुआ था। जहाँ आज धर्मशालाएँ आदि निर्मित हैं, यह पूर्व में श्मशानस्थल था। पर्वत के पीछे अभी भी करीब 200 एकड़ भूमि में समतल मैदान स्थित है। पहाड़ पर आज भी इस नगर के अवशेष दीवालों एवं चबूतरों के रूप में तथा पुराने कुँओं के रूप में देखने को मिलते हैं। ये अवशेष अपनी लीला उद्घाटित करवाने हेतु पुरातत्त्ववेत्ताओं के पथ पर आँखें बिछाये हुए हैं।

पर्वत के करीब एक मील दूर भयानक जंगल में एक 52 गज लंबी वेदिका है, जो कला की दृष्टि से 11-12वीं शताब्दी की ज्ञात होती है। इसी वेदिका के समीप हाथी खूँटा है जो पत्थर का बना हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि 11-12वीं शताब्दी में मूर्ति प्रतिष्ठा हेतु गजरथ महोत्सव का आयोजन किया गया था। यहीं पर समीप में एक विशाल नदी की बीच धारा में करीब 40-50 फुट ऊँची शिला है। सुनते है, इसी शिला से वरदत्तादि पंच यतीश्वरों ने मोक्ष लक्ष्मी का वरण किया था, इसे आज भी सिद्धशिला कहते हैं। इस शिला के ऊपर अनेक सुन्दर चित्र लाल रंग से अंकित हैं, जो हजारों वर्षों की वर्षा तथा धूप सहन करने के बावजूद आज भी सुरक्षित हैं। इसी सिद्धशिला पर विराजमान होकर आचार्य विद्यासागर जी ने अपने उत्कृष्ट हिन्दी महाकाव्य "मूकमाटी" को पूर्ण किया था।

शासकीय संरक्षण

महाराज पन्ना नरेश से इस क्षेत्रराज को पूर्ण संरक्षण प्राप्त होता रहा है। नैनागिरि ग्राम को आबाद करने एवं यात्रा करवाने हेतु महाराज की ओर से सनद प्राप्त हुई थी, जिसकी प्रतिलिपि निम्नांकित है-

श्री श्री श्री जू देव हजूर - खातर लिखाय देवे में आई श्रीसिंघई हजारी बकस्वाइ बारे को आपर परगने बक्स्वाह के कि मौजे नैनागिरि को आबाद करने व यात्रा लगाने की व अपने मान मुलाहजा बहाल रिहवे खातर लिख देवे कि दरख्वास्त करो ताकि दरख्वास्त मंजर भई मौजे मजकूर की अछीतरा आबाद करो अरु जात्रा लगवावों जो मान मुलाहजों इहाँ से बनो रहो सो बदस्तूर बनों रहेगो। नये सिर जास्ती कौन हू तरा न हू है और मौजे मजकूर की खबरदारी अछीतरा राखियों जीमें कौन हू तरा की नुकसान सरहद के भीतर जमीन को न होने पावें। वैशाख सुदी १५ सं. १९४२ मु.पन्ना

सील

मूल प्रति क्षेत्र कार्यालय में सुरक्षित है

उपर्युक्त आदेश के बाद से ही यहाँ प्रति वर्ष अगहन शुक्ला त्रयोदशी से पूर्णिमा तक मेला भरता है। इस अवसर पर सागर, दमोह तथा छतरपुर जिलों के समीपस्थ ग्रामों के व्यक्ति बाजार हेतु एकत्रित होते हैं तथा भारत के कोने-कोने से श्रद्धालुजन दर्शनार्थ उपस्थित होते हैं।

जनसाधारण की सुविधा हेतु यहाँ क्षेत्र की ओर से तालाब खुदवाया गया था। जिसकी सुरक्षा एवं क्षेत्र की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तत्कालीन पन्ना नरेश से निम्न आज्ञा प्राप्त हुई थी-

दरबार महान से

1. मंदिर नैनागिरिजी के लिए ५०० कुरबा, १५ बाँस, जलाऊ लकड़ी माफी में दी।

2. तालाब में नैनागिरि की जनता व मानकी आदि के मछली न मारें, न मवेशी नहलायें। जो शख्स मछली मारे, उन पर दफा ५ कानून जंगल के अनुसार सजा दी जायेगी।

3. खदान से पत्थर खोदने की माफी दी जाती है।

4. भट्टा चूना वास्ते सवा प्रति भट्टा देना होगा।

16-12-40

सही निशानी

डिवीजन साहिब की है मिसल पर

किन्तु खेद का विषय है कि वर्तमान शासन इस क्षेत्र के विकास की ओर अपेक्षित एवं पर्याप्त ध्यान नहीं दे रहा है। परिणामत: इस क्षेत्र पर पहुँचने में यात्रियों को अत्यधिक कठिनाइयाँ होती हैं। मध्यप्रदेश शासन तथा केन्द्रीय शासन से निवेदन किया जाना चाहिए कि इस क्षेत्र को सांस्कृतिक तथा पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित किया जावे।

मूर्तियाँ, मंदिर एवं सम्बद्ध स्मारक

यहाँ पर 1109 से लेकर प्रत्येक शताब्दी की मूर्तियाँ प्राप्त हैं। देशी पाषाण की अनेक प्राचीन मूर्तियाँ तालाब के बँधान में जहाँ तहाँ लगी हुई हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व के विद्वानों से निवेदन है कि इस क्षेत्र की प्राचीनता का अध्ययन करें, जिससे कि जैन संस्कृति का एक नवीन अध्याय अनावृत हो सके। वर्तमान में यहाँ पर प्राचीन एवं नवीन हजारों मूर्तियाँ हैं, जिनमें जैन धर्म के सहिष्णुता, त्याग और इन्द्रिय विजय के सिद्धान्तों का अंकन कलाकार ने पूर्ण सफलता के साथ किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ पहाड़ पर 37 मंदिर (मेरु एवं मानस्तम्भ सहित) हैं। एक विशाल मंदिर सरोवर में है। सरोवर के दक्षिणी तट पर विशाल नवीन समवशरण जिनालय का निर्माण किया गया है। 13 मंदिर उपत्यका में हैं। कुल मिलाकर यहाँ पर 52 मंदिर हैं। पार्श्वनाथ मंदिर में 14 फुट ऊँची पार्श्वनाथ की विशाल प्रतिमा के साथ चौबीसी बनी हुई है।

जैन धर्मशाला के पूर्व की ओर लगभग 100 फुट की दूरी पर 2 वेदिकाएँ गजरथ महोत्सवों की, जो कि विक्रम संवत् 1043 में एक साथ सम्पन्न हुए थे, बनी हुई हैं। उसके समीप में ही एक पाण्डुक शिला निर्मित है। ऊपर की ओर नाला पार करके करीब 4 फर्लांग दूरी पर एक पाण्डुक शिला और बनी हुई है। पर्वतराज के वर्तमान मंदिर समूह के पश्चिम की पहाड़ियों पर स्थित पाँच प्राचीन वेदिकाओं का पुनरुद्धार किया गया है।

समवशरण मंदिर

सरोवर एवं पहाड़ी के संगम पर 10,000 वर्ग फुट क्षेत्र में समवशरण मंदिर का निर्माण किया जा चुका है। यह समवशरण सम्पूर्ण देश का विशालतम समवशरण है। 8 फरवरी 1987 से 13 फरवरी 1987 तक परमपूज्य विद्यासागर जी के मंगल सान्निध्य में श्री पार्श्वनाथ समवशरण रचना मंदिर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सव का आयोजन किया गया था। इस आयोजन में क्षेत्र के तत्कालीन मंत्री श्री सेठ शिखरचन्द्र जी का अनुकरणीय योगदान रहा। प्रत्येक मानव जन को यह अपेक्षा है कि यह समवशरण चतुर्थकाल में नैनागिरि पर्वत पर आए भगवान पार्श्वनाथ के वास्तविक समवशरण की प्रतिकृति बने। इस महान कार्य में प्रत्येक व्यक्ति का तन, मन एवं धन के साथ सहयोग प्रार्थित है।

अतिशयपूर्ण तथा सफलतादायक

तीर्थंकर की पदरज से पवित्र इस सिद्धभूमि पर अनेक अतिशय होते रहते हैं। 50 फुट की ऊँचाई पर स्थित मंदिर की 2 फुट चौड़ी पट्टी पर खड़ा हुआ बैल अचानक ही बिना किसी खतरे के नीचे उतर आता है। वर्ष 1956 में गजरथ के समय कुएँ का जल समाप्त हो गया, किन्तु पार्श्वनाथ के स्मरण से कुछ ही घण्टों में कुँआ पानी से पूर्णतः भर गया। निष्ठापूर्वक तथा मनोयोग से पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन करने से दर्शक के मनोरथ शीघ्र ही प्रतिफलित हो जाते हैं। ऐसे अनेक अवसर आये हैं, जब पार्श्व प्रभु की वंदना से अनेक व्यक्ति अपने व्यवसाय में सफल हुए हैं या शासन के उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हुए हैं। पूज्य क्षमासागर जी द्वारा लिखित 'आत्मान्वेषी' में इस प्रकार की अनेक घटनाओं का उल्लेख किया गया है।

संत समागम

पूज्य आचार्य श्री शांतिसागर जी आदि अनेक आचार्य, मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक एवं ब्रह्मचारियों ने इस क्षेत्र के दर्शन किए हैं। मुनि आदिसागर जी महाराज, आचार्य विद्यासागर जी महाराज, आचार्य देवनन्दी जी महाराज एवं आचार्य विरागसागर जी महाराज का इस क्षेत्र के विकास में महत्त्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक योगदान रहा है।

आवश्यकता

न्यास के अध्यक्ष श्री महेन्द्र कुमार जी मलैया सागर, प्रबंध कारिणी समिति के अध्यक्ष श्री रघुवर प्रसाद डेवड़िया शाहगढ़, जिला सागर एवं मंत्री श्री सेठ दामोदर जी जैन, शाहगढ़, जिला सागर के प्रभावी एवं कुशल नेतृत्व में देश एवं प्रदेश में प्रचलित प्रबंध विज्ञान के संदर्भ में यहाँ की व्यवस्था विकसित की जा रही है। अनेक मंदिर एवं धर्मशालाओं का जीर्णोद्धार किया गया है। आधुनिक सुविधा सम्पन्न नवीन धर्मशालाओं का निर्माण किया गया है। समाज के कर्णधारों से निवेदन है कि वे इस क्षेत्र की ओर अपना लक्ष्य करें, जिससे कि पूर्वजों की इन धरोहरों एवं जैन धर्म के कला केन्द्र का विकास शीघ्रतापूर्वक किया जा सके।

30, निशात कालोनी,
भोपाल म.प्र. 462003

गजल

ऋषभ समैया 'जलज'

स्मृतियों की जंजीरों से बँधे हुए
सबके सब हैं आशाओं से लदे हुए

●

लाइलाज़ मर्जों को न्यौता देते हैं
कुंठाओं के फल होते हैं कँदे हुए

●

बोझ लादते जाने के हम आदी हैं
भले आदमी, जानबूझ कर गधे हुए

●

फंदों पर आरोप लगाना बेमानी
हम अपनी कायरता से ही फँदे हुए

●

असफलताओं पर मुँह लटका कर बैठे
वे अपनी ही लाशों को खुद कंधे हुए

●

टकराजाने के संयोग अनेकों हैं
बड़ी भूल, गर नयन हमारे मुँदे हुए

निखार भवन, कटरा, सागर म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाबा भागीरथी के शासन काल में स्व. पू. गणेशप्रसाद जी वर्णी

डॉ. श्रीमती रमा जैन

घटना उस समय की है, जब छात्र श्री गणेशप्रसाद जी स्याद्वाद विद्यालय काशी में अध्ययन करते थे। उस समय संस्था के अधिष्ठाता बाबा भागीरथ जी थे। घटना स्वयं वर्णी जी के शब्दों में प्रस्तुत है-आश्विन सुदि 9वीं को मेरे मन में आया कि रामलीला देखने के लिए रामनगर जाऊँ। सैकड़ों नौकाएँ गंगा से रामनगर को जा रही थीं। मैंने भी जाने का विचार कर लिया। 5 या 6 छात्रों को भी साथ में लिया। उचित तो यह था कि बाबाजी महाराज से आज्ञा लेकर जाता, परन्तु महाराज सामायिक के लिये बैठ गये थे। बोल नहीं सकते थे, अत: मैंने सामने खड़े होकर प्रणाम किया और निवेदन किया कि महाराज! आज रामलीला देखने के लिए रामनगर जाते हैं। आप सामायिक में बैठ चुके हैं, अत: आज्ञा न ले सके।

गंगा के घाट पर पहुँचे और नौका में बैठ गये। नौका घाट से कुछ ही दूर पहुँची थी कि इतने में वायु का वेग आया और नौका डगमगाने लगी। बाबाजी भागीरथ की दृष्टि नौका पर गई और उनके निर्मल मन में एकदम विकल्प उठा कि अब नौका डूबी, अनर्थ हुआ। इस नादान को क्या सूझी, जो आज इसने अपना सर्वनाश किया और छात्रों का भी। नौका पार लग गई। रात्रि के दस बजे हम लोग रामनगर वापिस आ गये। आते ही बाबाजी ने कहा- 'पंडित जी! कहाँ पधारे थे?'

यह शब्द सुनकर हम तो भय से अवाक् रह गये। महाराज कभी तो पंडित जी कहते नहीं थे, आज कौन सा गुरुतम अपराध हो गया, जिससे महाराज इतनी नाराजी प्रकट कर रहे हैं? मैंने कहा- बाबाजी रामलीला देखने गये थे। उन्होंने कहा- "किससे छुट्टी लेकर गये थे? मैंने कहा- 'उस समय सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब तो मिले न थे और आप सामायिक करने लग गये थे, अत: आपको प्रणाम कर आज्ञा ले चला गया था। मुझसे अपराध अवश्य हुआ है, अत: क्षमा की भिक्षा माँगता हूँ।

बाबा जी बोले- 'यदि नौका डूब जाती तो क्या होता? मैंने कहा 'प्राण जाते। उन्होंने कहा- फिर क्या होता? मैंने मुस्कराते हुए कहा- 'महाराज! जब हमारे प्राण चले जाते, तब क्या होता वह आप जानते, या जो यहाँ रहते वे जानते, मैं क्या कहूँ? अब जीवित बच गया हूँ। यदि आप पूछें कि अब क्या होगा? तो उत्तर दे सकता हूँ।' 'अच्छा कहो ..... बाबाजी ने शान्त होकर कहा? मैं कहने लगा - 'मेरे मन में तो यह विकल्प आया कि आज मैंने महान् अपराध किया है, जो बाबाजी की आज्ञा के बिना रामलीला देखने के लिए रामनगर गया। यदि आज नौका डूब जाती, तो पाठशालाध्यक्षों की कितनी निंदा होती? हमें इस अपराध में बाबाजी पाठशाला से निकाल देंगे। भागीरथ बाबाजी ने कुछ विस्मय के साथ कहा तुम अक्षरश: सत्य कहते हो? बिल्कुल यही होगा।

उन्होंने सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब को बुलवाया और शीघ्र ही पत्र लिखकर उसी समय लिफाफे में बंद किया, उसके ऊपर लेटफीस लगाकर चपरासी के हाथ में देते हुए कहा कि तुम इसे इसी समय पोस्ट आफिस में डाल आओ। मैंने बहुत ही विनय के साथ प्रार्थना की-महाराज! अबकी बार माफी दी जावे। अब ऐसा अपराध न होगा। बाबाजी एकदम गरम हो गए। जोर से बोले-तुम नहीं जानते, मेरा नाम 'भागीरथ' है और मैं ब्रज का रहने वाला हूँ अब तुम्हारी भलाई इसी में है कि यहाँ से चले जाओ।

'अच्छा महाराज! जाता हूँ' कह कर शीघ्र ही बाहर आया और चपरासी से, जो कि बाबाजी चिट्ठी डाक में डालने के लिए जा रहा था, मैंने कहा-भाई चिट्ठी क्यों डालते हो? बाबाजी महाराज तो क्षणिक रुष्ट हैं, अभी प्रसन्न हो जावेंगे। यह एक रुपया मिठाई खाने को लो और चिट्ठी हमें दे दो। वह भला आदमी था, चिट्ठी हमें दे दी और दस मिनट बाद आकर बाबाजी से कह गया कि चिट्ठी डाल आया हूँ। बाबा जी बोले - 'अच्छा किया पाप कटा।' मैं इन विरुद्ध वाक्यों को श्रवण कर सहम गया। हे भगवन्! क्या आपत्ति आई? जो मुझे हार्दिक स्नेह करते थे, आज उन्हीं के श्रीमुख से यह शब्द निकले कि 'पाप कटा।'

मैंने कहा - 'महाराज! यदि आज्ञा हो तो जाते-जाते छात्र समुदाय में कुछ भाषण करूँ और चला जाऊँ। बाबा जी ने कहा- अच्छा जो कहना हो, शीघ्रता से कहकर 15 मिनट में चले जाना। अन्त में, साहस बटोर कर भाषण करने के लिए खड़ा हुआ- महानुभावो, बाबाजी महोदय! श्री सुपरिन्टेन्डेन्ट सा. तथा छात्रवर्ग! कर्मों की गति विचित्र है। देखिये, प्रात:काल श्री रामचन्द्र जी का युवराज-तिलक होने वाला था, जहाँ बड़े-बड़े ऋषिलोग मुहूर्त शोधन करने वाले थे। किसी प्रकार की सामग्री की न्यूनता न थी, पर हुआ क्या? सो पुराणों से सबको विदित है। किसी कवि ने कहा भी है-

यच्चिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति,
यच्चेतसापि न कृतं तदिहाभ्युपैति।
प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती
सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्यादि बहुत कथानक शास्त्रों में मिलते हैं। जिन कार्यों की सम्भावना भी नहीं, वे आकर हो जाते हैं और जो होने वाले हैं, वे क्षणमात्र में विलीन हो जाते हैं। कहाँ तो यह मनोरथ कि इस वर्ष 'अष्टसहस्री' में परीक्षा देकर अपनी मनोवृत्ति को पूर्ण करेंगे एवं देहात में जाकर पद्मपुराण के स्वाध्याय द्वारा ग्रामीण जनता को प्रसन्न करने की चेष्टा करेंगे। कहाँ यह बाबाजी का मर्मघाती संदेश ?

यह आज्ञा कि निकल जाओ ..... पाप कटा ! यह उनका दोष नहीं, जब दुर्भाग्य का उदय होता है, तब सबके साथ यही होता है।

आप लोगों से हमारा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा, आप लोगों के सहवास से अनेक प्रकार के लाभ उठाये अर्थात् ज्ञानार्जन किया, सिंहपुरी, चंद्रपुरी की यात्रा की। पठन-पाठन का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि आज स्याद्वाद पाठशाला, 'विद्यालय' के रूप में परिणत हो गई। जहाँ काशी में जैनियों के नाम से पण्डितगण नास्तिक शब्द का प्रयोग करते थे, आज उन्हीं लोगों द्वारा यह कहते सुना जाता है कि जैनियों में प्रत्येक विषय पर उच्च कोटि का साहित्य विद्यमान है। हम लोग इनकी व्यर्थ ही नास्तिकों में गणना करते थे। यह सब छात्र तथा बाबा जी का उपकार है, जिसे समाज को हृदय से मानना चाहिए। मैंने इस योग्य अपराध नहीं किया है, कि निकाला जाऊँ। प्रथम तो मैंने आज्ञा ले ली थी। हाँ, इतनी गल्ती अवश्य हुई कि सामायिक के पहले नहीं ली थी। बाबा भागीरथ जी बोले- ''रात्रि अधिक हो गई, सब छात्रों को निद्रा आती है।

मैं बोला-बाबा जी! इन छात्रों को तो आज ही निद्रा जाने का कष्ट है, परन्तु मेरी तो सर्वदा के लिये निद्रा भंग हो गई ?

बाबा जी! मुझे तो क्रोध के ऊपर क्रोध आ रहा है-

अपराधिनि चेत्क्रोधः क्रोधे क्रोधः कथं न हि।
धर्मार्थकाममोक्षाणां चतुर्णां परिपन्थिनि ॥

'यदि आप अपराधी पर ही क्रोध करते हो, तो सबसे बड़ा अपराधी क्रोध है, क्योंकि वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का शत्रु है, उसी पर क्रोध करना चाहिये।' मैं सानंद यहाँ से जाता हूँ। न आपके ऊपर मेरा कोई वैर-भाव है और न छात्रों के ही ऊपर।

अन्त में, बाबाजी को प्रणाम और छात्रों को सस्नेह जय जिनेन्द्र कहकर जब चलने लगा तब नेत्रों से अश्रुपात होने लगा। न जाने, बाबाजी को कहाँ से दया आ गई! सहसा बोले उठे- 'तुम्हारा अपराध क्षमा किया जाता है' तथा इस आनंद में कल विशेष भोजन कराया जावेगा।'

'जीवन यात्रा' से साभार

विद्यार्थी भवन, 81, छत्रसाल रोड, छतरपुर (म.प्र.) 471001

कु. वीणा को 'नेशनल अवार्ड' : जैन समाज गौरवान्वित

राष्ट्रीय बाल पुरस्कार (नेशनल चाइल्ड अवार्ड) 2001 प्रदान करते हुए महामहिम उपराष्ट्रपति श्री कृष्णकान्त ने विज्ञान भवन, देहली में अपने उद्बोधन में कहा 'ऐसी असाधारण प्रतिभाओं पर हमें नाज है तथा इनसे देश को बहुत आशाएँ हैं।

जैन समाज को कला जगत में गौरवान्वित कर रही 14 वर्षीय कु. वीणा अजमेरा जैन ने सम्पूर्ण जैन जगत में पहली बार भारत सरकार का नेशनल अवार्ड प्राप्त किया, ख्याति प्राप्त लिम्काबुक में अपना रिकार्ड दर्ज़ कराया, संगीत नाटक अकादमी से पुरस्कृत होकर व यूनेस्को एसोसिएशन अवेयरनेस अवार्ड प्राप्त कर यह साबित कर दिया है कि जैन समाज में प्रतिभाओं की कमी नहीं है। आवश्यकता है उन्हें उचित प्रोत्साहन, प्रशिक्षण व प्रकाश में लाने हेतु समाज के अग्रणी लोगों के सहयोग व समर्थन की। अपने प्रसिद्ध मंगल कलशनृत्य से अहिंसा पर्यावरण, सुरक्षा, शाकाहार, व्यसनमुक्ति व विश्व बंधुत्व के संदेशवाहक 36 झूलते हुए कलश सिर पर रखकर नृत्य में अखिल भारतीय रिकार्ड बनाने वाली भीलवाड़ा की इस बालिका ने देश-विदेश में 60 से अधिक प्रदर्शन देकर एक कीर्तिमान स्थापित किया है एवं अब यह विश्व रिकार्ड स्थापित करने हेतु गहन अभ्यासरत है। कु. वीणा के प्रदर्शन मात्र लोकरंजन के लिये न होकर लोकमंगल हेतु भी महत्त्वपूर्ण हो यह उसके परिजनों की भावना रही है। इस हेतु गत 2 वर्षों में वह अनेक कार्यक्रम गोपालन केन्द्र, चिकित्सालयों, भूकंप पीड़ितों एवं शैक्षणिक कार्यों के सहायतार्थ प्रस्तुत कर चुकी है तथा शीघ्र ही अंधता निवारण अभियान आईलैंस प्रत्यारोपण हेतु कुछ प्रदर्शन देगी। 'म्यूजिक फार मेनकाइन्ड' के लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ रही कु. वीणा से जैन समाज ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण कला जगत को बहुत आशाएँ हैं।

निहाल अजमेरा, निदेशक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आप नवनिर्माण से परेशान हैं या ध्वंसात्मक विचार से ?

डॉ.सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

हो सकता है कुछ तथाकथित समाजसेवियों को मेरे विचार अच्छे नहीं लगें और उनका मन पत्थर मारने का हो जाए, किन्तु यह हकीकत है कि यदि 1000 वर्षों के समाज-हितैषियों, जिनधर्म संवर्धकों के विचार ऐसे ही रहे होते, तो आज न तो भारत में कोई जैन तीर्थ होते और न जैनायतन, न शास्त्र होते, न शास्त्रकार, न दिगम्बर गुरु होते न दिगम्बरत्व। जैन समाज में आजकल इतने समाज सुधारक, समाजसेवी, संरक्षणकर्त्ता , न्यायप्रिय, बेलाग बोलने वाले-वाचाल, श्रावक-समाज-शिरोमणि, विद्वान, संपादक, पत्रकार पैदा हो गये हैं कि लगने लगा है कि जैसे समाज में सामान्य जनों का अभाव हो गया है और जो भी पैदा हो रहा है वह दिशाबोधक है या समाजसुधारक, चिन्तातुर है, मुनियों का सुधारक और उनका मानना है कि यदि कोई ठीक है तो सिर्फ वही। वे चाहते हैं कि चलो, मगर मेरी ऊँगली पकड़कर, वरना चलो ही मत। आखिर किसी को क्या हक है कि वे अपने दिमाग से सोचें, अपने कदमों से चलें ? वे तो सिर्फ जलाना चाहते हैं और ज्वलनशील पदार्थों-विचारों का प्रस्फुटन करते रहते हैं। आज एक ओर ऐसे कर्णधार हैं, जो जैनसमाज के सर्वाधिक वरिष्ठ आचार्य, सर्वाधिक दीक्षाप्रदाता, लाखों निरीह पशुओं की मूक भावना को मुखरित करने वाले संत शिरोमणि श्री विद्यासागरजी महाराज को सर्वोच्च संत नहीं मानते। अपनी पत्र-पत्रिकाओं में यदि कहीं उनका नामोल्लेख भी करते हैं तो हाल ही में बने आचार्यों के बाद। वे वरिष्ठता में विश्वास नहीं करते, बल्कि चाहते हैं कि जो उन्हें वरिष्ठ मानें उन्हें वे वरिष्ठ मानें। ये लेन-देन का सौदा अब आचार्य को तो इष्ट होगा नहीं। वे बात भले ही आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज की करें, किन्तु उनकी ही पीढ़ी के संतों को मानने, सम्मान देने में संकोच होता है। यह कहाँ का न्याय है कि कोई पाँचवीं पीढ़ी को तो अपना माने और तीसरी पीढ़ी को अपना मानने से इन्कार करे ? आज स्थिति यह है कि जब भी किसी अन्य आचार्य की जय बोलनी हो तो सबसे पहले मुँह पर आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का ही नाम आता है। वे आज मात्र संत नहीं, संत के पर्याय हैं। वे मात्र आचार्य नहीं आचार्यों के आदर्श हैं, जैनत्व की आस्था हैं, प्रतिष्ठा हैं उन्हें 'इग्नोर' करना धूप में चलते हुए सूरज के अस्तित्व से इंकार करना है। वे सब कुछ करते हुए भी संतत्व से च्युत नहीं होते। उनके पुण्यमय चरित्र की सुगन्ध चन्दन की सुगन्ध की तरह सबको मोहती है, फिर भी वे आज तथाकथित समाजसुधारकों के निशाने पर हैं, आखिर क्यों ? मुझे तो इन तथाकथित सुधारकों के कृत्यों को देखकर लगता है कि-

तुम्हारी तहज़ीब अपने खंजर से आप ही खुदकुशी करेगी।
जो शाखे नाजुक पै आशियाना बना नापायादार होगा॥

परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के सर्वाधिक प्रशंसित, चर्चित और तथाकथित समाजसुधारकों की आँखों की किरकिरी बने मुनिपुंगव श्री सुधासागरजी महाराज के प्रति एक ओर जहाँ बुन्देलखण्ड और राजस्थान में 99.9 प्रतिशत नर-नारी श्रद्धा से नतमस्तक हैं, उनके विचारों और कार्यों को महान उपकार की तरह देखते हैं, वहीं इन सुधारकों को उनके कार्यों में खोट-ही-खोट नजर आती है। उन्हें पू. मुनिश्री की प्रेरणा से विकसित हर तीर्थ खोटा नजर आता है। देवगढ़, बजरंगगढ़, सांगानेर, रैवासा का वैभव एवं विकास उनकी आँखों में खटकता है। उन्हें तो यह भी लगता हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं कि नारेली के ऊबड़-खाबड़ रेतीले प्रदेश में जो ज्ञानोदय तीर्थ बन रहा है, उससे रेत ढँक गयी है और वह अब हवा के साथ उड़ नहीं पाती। मुझे इन तथाकथित सुधारकों की वीरता देखकर आश्चर्य होता है कि ये लोग जब बद्रीनाथ में बनते हुए जैन मन्दिर को गिरा दिया गया, मूर्ति को रास्ते से ही वापिस कर दिया गया और उत्तरांचल के तत्कालीन मुख्यमंत्री नित्यानंद स्वामी ने कहा कि "हम वहाँ जैन मन्दिर बनवाकर बद्रीनाथ तीर्थ की भूमि को अपवित्र नहीं करवाना चाहते" तब ये विरासत के मसीहा कहाँ सो गये थे ? आज भी ये विरासती बरसाती मेंढकों की तरह टर्राने वाले सुधारक गिरनारतीर्थ जाकर भगवान नेमिनाथ की निर्वाण भूमि पर निर्वाण चालीसा का अर्थ क्यों नहीं समझाते ? क्यों नहीं जाते जहाँ भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति पर विधर्मियों ने कब्जा जमा रखा है ? ये लोग कल्याण निकेतन (शिखरजी) पर अवैध रूप से कब्जा करने की योजना बनाने वाले, सम्मेदशिखर पारसनाथ टोंक पर कब्जा करने की योजना बनाने वाले, उसी पर्वत की पवित्र भूमि पर उग्रवादी शिविर कायम करने वालों के खिलाफ विद्रोह/बगावत का झण्डा क्यों नहीं उठाते ? क्या मैं पूछ सकता हूँ कि संस्कृति संरक्षण का दम भरने वाले इन लैटरहैडधारी सुधारकों से सरिस्का (नीलकण्ठ) में टीन शेड के नीचे रखी जिनमूर्तियों और खुले में हवा-पानी-धूप खा रही जिन मूर्तियों के संरक्षण के लिए क्या पहल की है ? मैं जानना चाहता हूँ कि फतेहपुर सीकरी (आगरा) में दीवालों पर चिनी हुई जैन मूर्तियों का सचित्र रहस्य उजागर होने के बाद इन तथाकथित पुरातत्त्वप्रेमियों ने अँगड़ाई क्यों नहीं ली ? क्या इन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुधारकों ने मदनपुर, गोलाकोट, गोपाचल का खण्डित होता पुरातत्त्व नहीं देखा ? आखिर ये कौन से विश्वकोश पुरातत्त्व की परिभाषा पर अमल करते हैं जो इन्हें हर संरक्षण का कार्य विनाश नजर आता है ? जरा सोचिए।

अभी हाल ही में एक वयोवृद्ध समाज सेवी ने बिना तथ्य जाने चाँदखेड़ी में चल रहे सुधारकार्यों पर ऊँगली उठायी है। क्या उन्हें पता नहीं कि वहाँ की क्षेत्र प्रबन्धकारिणी कमेटी में जागरूक समाजसेवियों की कोई कमी नहीं है, जो बढचढ़कर विकास को गति दे रहे हैं, उनकी भावना क्या है ? या मात्र मुनिश्री सुधासागर जी के पदार्पण से ही कमेटी के विचार बदल गये हैं ? मूलनायक प्रतिमा हटाने का न आज संकल्प समिति ने किया है, न हटाई गयी है तो फिर अग्रिम बावेला क्यों ? क्या आपने पुरातत्त्व से बड़वानी में बावनगजा की मूर्ति से छेड़छाड़ नहीं की ? क्या मूर्तियों पर लगे सीमेन्ट के जोड़ समाज से छिपे हैं ? क्या यह सच नहीं कि उन जोड़ों को ढँकने के लिए मेले से पूर्व बीसों किलो नारियल का तेल नहीं पोता जाता है ? मैंने स्वयं जीर्णोद्धार के पहले भी बावनगजा के दर्शन किये थे और जीर्णोद्धार के बाद भी। मेरा दिल कहता है, आपका दिल भी कहता होगा कि जो हुआ वह अपेक्षा के अनुरूप खरा नहीं उतरा। कोई भी पुरातत्त्वप्रेमी जानकार निष्पक्ष दर्शक-समीक्षक इस कार्य-परिणति पर शाबाशी नहीं देगा। मैं यहाँ यह भी कहना चाहता हूँ कि जिन्होंने जीर्णोद्धार की योजना बनायी थी वे गलत नहीं थे, उनका सोच गलत नहीं था। वे भी उतने ही मूर्ति या पुरातत्त्व के शुभचिन्तक थे जितने कि आचार्य श्री विद्यासागर या मुनिश्री सुधासागर, किन्तु जब मूर्ति पर कोई लेप टिका ही नहीं तो कोई क्या कर सकता था ? आयोजकों के इस तर्क को मैंने भी स्वीकार किया था, किन्तु जब ऐसे लोग दूसरों के अच्छे कार्यों पर ऊँगली उठाते हैं, तो टीस होती ही है। मेरा तो मानना है कि जो करता है, गलती की संभावना उसी से होती है, निकम्मों से क्या गलती होगी ? सवाल आस्था का भी है। कुंवर बैचेन ने ठीक ही लिखा है कि-

अगर पूजो तो पत्थर भी मूरत है,
अगर फेंको तो मूरत भी है पत्थर ॥

यदि कोई गल्ती कहीं हो भी गयी हो तो वह भविष्य में न हो, इस सजगता से इनकार नहीं किया जा सकता। किन्तु पुरातत्त्व के संरक्षण के नाम पर हम अपनी निरन्तर क्षरित हो रही मूर्ति एवं मन्दिर सम्पदा को कब तक देखते रहेंगे ? विचार करेंगे कि अहारजी में यदि भ.शान्तिनाथ की मूर्ति को खंडित ही रहने दिया गया होता तो क्या वह स्थिति होती जो अब वहाँ है ? मेरा तो मानना है कि यदि कहीं भूल हुई है तो विचारें कि -

हमसे खता हुई तो बुरा मानते हो क्यों ?
हम भी तो आदमी हैं कोई खुदा नहीं ॥

दरअसल आज इस बात पर विचार की आवश्यकता है कि देवगढ़, बजरंगगढ़, कुण्डलपुर, अमरकंटक, मुक्तागिरि, रामटेक, नेमावर, सांगानेर, बैनाड़, रैवासा, भाग्योदय तीर्थ अस्पताल प्रशासकीय प्रशिक्षण संस्थान, श्री वर्णी दि. जैन गुरुकुल मढ़ियाजी जबलपुर, श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर, ऋषभदेव ग्रन्थमाला, सांगानेर, आचार्य ज्ञानसागर वागर्थ विमर्श केन्द्र, अशोक नगर स्थित त्रिकाल चौबीसी, शताधिक शोध प्रबन्धों और द्विशताधिक धार्मिक ग्रन्थों का प्रकाशन, शोध संगोष्ठियों के आयोजन, वाचनाओं का आयोजन, श्रावक संस्कार शिविरों का आयोजन आदि कार्य आवश्यक थे या नहीं ? इनसे जैनत्व की प्रभावना हुई या अप्रभावना ? हमने अपनी धरोहर कम की है या बढ़ायी है ? आप इनके प्रेरकों पर आपत्ति करते हैं या इनके कार्यों पर ? मुझे यह भी पता है कि विरोध करने वालों में अनेक लोग तीर्थक्षेत्रों की समितियों से सम्बद्ध हैं, जहाँ लाखों रुपये प्रति वर्ष आते हैं, फिर भी वहाँ आज तक न तो कोई श्रावक संस्कार शिविर लगा है, न कोई विद्यालय खुला है, साधुओं के आहार-वैयावृत्य तक की व्यवस्था नहीं है ? मेरा विरोधियों से भी विरोध नहीं है, क्योंकि विरोध से काम में गति आती है, किन्तु दुःख तो यह है कि इन विरोध के तीखे स्वरों से समाज में कलुषता, मनोमालिन्य का वातावरण बन रहा है, जो उन्हें भले ही इष्ट हो, एक सामाजिक के नाते मुझे इष्ट नहीं है। आशा है, सबको सद्बुद्धि आयेगी।

सफर लम्बा है पर चलते रहिए।
दिल से दिल और हाथ से हाथ मिलाते रहिए॥

एल-65, नया इन्दिरा नगर 'ए'
बुरहानपुर- 450331 (म.प्र.)

अजमेर में श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान सम्पन्न

परमपूज्य मुनि 108 श्री गुणसागरजी महाराज एवं संघस्थ आर्यिकागण के शुभ आशीर्वाद से हाथीभाटा-स्थित जैन मन्दिर में श्री नेमीचन्द्र रूपेशकुमार कुहले परिवार द्वारा श्री सिद्धचक्र महामंडल विधान पूजन दिनांक 21 से 28 मार्च तक सानंद सम्पन्न हुआ।

जैन सेवा समर्पण मंच एवं जैन महिला जागृति मंडल की ओर से दिनांक 31.3.2002 को श्री दि. जैन ज्ञानोदय तीर्थक्षेत्र नारेली में स्नेह मिलन समारोह में समाज के प्रबुद्ध महानुभावों का सम्मान आयोजित हुआ।

हीराचन्द्र जैन, प्रचार-प्रसार संयोजक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शाकाहार एवं मांसाहार : एक तुलनात्मक आर्थिक विश्लेषण

कु. रजनी जैन

विश्व के विभिन्न देशों में विविध प्रकार की मानव संस्कृतियाँ पायी जाती हैं। उनके रहन-सहन एवं आहार प्रणालियों में अनेक विविधताएँ हैं। प्राचीन परम्परा एवं धार्मिक मान्यताओं के कारण एक वर्ग की आहार सामग्री दूसरे वर्ग की आहार सामग्री से भिन्न होती है। मानव आहार की वस्तुओं को यदि वर्गीकृत किया जाए, तो उन्हें मोटे तौर पर दो समूहों में विभाजित कर सकते हैं। एक शाकाहार, दूसरा मांसाहार। इन दोनों में मुख्य अन्तर अण्डा, मछली और किसी भी तरह के मांस को मनुष्य द्वारा अपने भोजन में शामिल करने और छोड़ने में है।

संसार में जन्म लेने वाले प्राणी अपने अस्तित्व और शारीरिक विकास के लिए आहार पर निर्भर हैं। किसी भी प्राणी के लिये वायु, जल के बाद सबसे बड़ी आवश्यकता भोजन ही हुआ करती है। मनुष्य के लिये भी भोजन अनिवार्य आवश्यकताओं में से एक है। अत: मानव-आहार की वस्तुएँ क्या हों? वह उन्हें कब और कितनी मात्रा में ग्रहण करे? यह हमारे चिन्तन का प्रमुख विषय होना चाहिये। आज पूरे विश्व में दोनों आहार शैलियाँ-शाकाहार तथा मांसाहार में कौन श्रेष्ठतम है, इसका निर्णय करने हेतु इसके विविध पहलुओं पर विस्तृत विश्लेषण, अन्वेषण तथा शोध किया जा रहा है। हमारे सोच, स्वास्थ्य, सक्रियता और आर्थिक स्तर को प्रभावित करनेवाली दोनों आहारपद्धतियों की श्रेष्ठता जानने- परखने की सहज जिज्ञासा मेरे मन में भी उठी। मैंने अपने प्राध्यापक डॉ. सुमति प्रकाश जैन से अपनी यह जिज्ञासा प्रकट कर शोधकार्य में उनका मार्गदर्शन चाहा, जिसकी उन्होंने सहर्ष सहमति दे दी। तत्पश्चात् मैंने उनके मार्गदर्शन में "शाकाहार एवं मांसाहार: एक तुलनात्मक आर्थिक विश्लेषण" विषय पर एक शोध कार्य संपादित किया। दोनों आहार पद्धतियों के आर्थिक विश्लेषण, स्वास्थ्य संबंधी वैज्ञानिक तथ्यों, दोनों आहार शैली अपनाने वाले व्यक्तियों से सूक्ष्म चर्चा तथा गहन चिंतन-मनन के बाद शाकाहार बनाम मांसाहार के बारे में जो तथ्य ज्ञात किए हैं, उनका सारांश इस आलेख में प्रस्तुत है।

शोध- सारांश से हमारे प्रबुद्धजन भी शाकाहार एवं मांसाहार की तुलना कर सकते हैं।

आर्थिक दृष्टि से उत्तम खाद्यान्न वही माना जाता है, जिसे कम लागत में अधिक मात्रा में प्राप्त किया जा सके। जिसकी गुणवत्ता भी अपेक्षाकृत अधिक हो। इसके लिए हम शाकाहार एवं मांसाहार की उत्पादन लागत से लेकर उसके बाजार मूल्य एवं उनका उपभोग करने पर **प्राप्त** होने वाली पोषणता का विश्लेषण करेंगे। इस हेतु हम पहले शाकाहार को उत्पादन लागत और गुणवत्ता की कसौटी पर परखेंगे।

1. शाकाहार की उत्पादन लागत - शाकाहारी पदार्थों का स्रोत पेड़ हैं, जो कुछ मात्रा में तो प्रकृति द्वारा नि:शुल्क प्राप्त हैं और शेष कृषि द्वारा मनुष्य अपने परिश्रम से उत्पन्न करता है। अत: कृषि द्वारा अनाज, फल-सब्जियों को उगाने में जो व्यय होगा, वही उनकी उत्पादन लागत होगी। एक हैक्टेयर भूमि में फसल के उत्पादन पर निम्न व्यय होते हैं :-

(क) खेतों की जुताई - किसी भी फसल के उत्पादन के लिए कम से कम दो बार जुताई करना आवश्यक है, जिसका व्यय लगभग 1000/- रुपये आता है।

(ख) भूमि उपचार -अंतिम जुताई अर्थात् बीज बोने के पूर्व उपचार हेतु दवाओं के प्रयोग में 100/- रुपये तक खर्च हो जाते हैं।

(ग) बीज - एक हैक्टेयर भूमि में बोने के लिए बीज करीब 500 रुपये तक की कीमत के प्राप्त होते हैं।

(घ) खाद- एक हैक्टेयर भूमि में जो खाद डाली जाती है, वह लगभग 2000 रुपये तक की पड़ती है और कल्चर व बीजोपचार दवा हेतु 50 रुपये तक व्यय हो जाते हैं।

(ङ) बुवाई - खेत में बीजों की बुवाई के लिए 500 रुपये तक का खर्च आ जाता है, क्योंकि बुवाई के लिए भी हल या ट्रेक्टर की आवश्यकता होती है।

(च) सिंचाई - फसलों की सिंचाई कम से कम दो बार तो होती ही है। इसके लिए जिन पम्पों का इस्तेमाल किया जाता है, उनके डीजल व विद्युत व्यय पर लगभग 500 रुपये होता है।

(छ) कीटनाशक - फसलों पर बालियाँ व फलियाँ आने पर उन पर कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता है, इसमें लगभग 500 रुपये तक का व्यय आ जाता है।

(ज) परिश्रम - तैयार फसल की रखवाली करने में उसकी निंदाई व कटाई करने में जो परिश्रम होता है, उसका व्यय लगभग 2000 रुपये तक आता है। अनाजों, फल एवं सब्जियों को खेतों से गोदामों तक और गोदामों से बाजार तक लाने में जो व्यय होता है, वह भी परिवहन व्यय के रूप में शाकाहार की उत्पादन लागत में जुड़ जाता है। इन सब व्ययों का योग किया जाए तो एक हैक्टेयर भूमि में उत्पादित शाकाहारी पदार्थ की उत्पादन लागत लगभग 8000 रुपये से 10000 रुपये तक आती है और 30 से 40 क्विं. अनाज उत्पादित हो जाता है। एक क्विं. अनाज का बाजार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाव कम से कम 500 से 600 रुपये होता है, जिसका विक्रय मूल्य 20 से 25 हजार रुपये तक होता है।

2. मांसाहार की उत्पादन लागत

मांस भोजन प्राप्त करने का एक सैकण्ड हैण्ड तरीका है। पशु अपने भोजन के लिए पेड़-पौधों पर आश्रित रहते हैं। पहले वे अनाज व घास-फूस आदि खाते हैं, जो शरीर में पहुँचकर मांस तथा रक्त आदि में परिवर्तित हो जाता है। फिर मांसाहारियों द्वारा उनके मांस का भक्षण किया जाता है। इस तरह मांसाहार की उत्पादन लागत में शाकाहारी पदार्थों की उत्पादन लागत के साथ-साथ पशुओं की देख-भाल के व्यय, उनके वध करने की लागत, तैयार मांस की जाँच-पड़ताल, पैकिंग एवं विक्रय के व्यय शामिल होते हैं।

पशुओं को वध करने की लागत में बूचड़खाने में कार्यरत श्रमिकों की मजदूरी, पशुओं के कत्ल के पूर्व तथा कत्ल के पश्चात् होने वाले परीक्षण व्यय, ऊर्जा व्यय, तैयार गोश्त की जाँच के व्यय तथा कत्लखानों की स्वच्छता व देख-रेख के व्यय भी शामिल हैं।

कत्लखानों में पशुओं के वध के लिए अत्यधिक मात्रा में ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जैसे सुअरों के वध के लिये दिये जाने वाले विद्युत आघात, गाय, भैंसों, बछड़ों व अन्य जानवरों को काटने के लिए जिन मशीनों का उपयोग किया जाता है, उनका ऊर्जा व्यय आदि।

मुर्गीपालन केन्द्रों में मुर्गियों को उचित तापमान में रखने के लिये अधिक क्षमता वाले विद्युत बल्बों का प्रयोग किया जाता है। इस तरह विद्युत ऊर्जा प्राप्ति के लिए खर्च की गई बड़ी धन राशि भी मांस की उत्पादन लागत में शामिल होती है। इसके अलावा पशुओं को लाने-ले जाने में हुए यातायात के व्यय तथा तैयार मांस के संरक्षण एवं वितरण के व्यय भी इसकी उत्पादन लागत को बढ़ा देते हैं। इस तरह मांसाहार की उत्पादन लागत शाकाहार की उत्पादन लागत से लगभग 5 से 10 गुना अधिक होती है।

शाकाहारी एवं मांसाहारी पदार्थों की उत्पादन लागत

पदार्थ	प्रति टन उत्पादन लागत (रु. में)
बीफ (गौमांस)	9310
मटन (भेड़-बकरी का मांस)	22,540
पोर्क (सुअर का मांस)	21,210
गेहूँ	2,170
जई	1,820
अण्डा	18,000
मछली	20,000

उपर्युक्त तालिका से हमें मांसाहारी और शाकाहारी भोज्य पदार्थों की उत्पादन लागत में भारी असमानता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। कुछ व्यक्तियों का मत है कि अण्डों की उत्पादन लागत अनाज की उत्पादन लागत से कम होती है, लेकिन परीक्षण किया जाये तो बात गलत सिद्ध होती है, क्योंकि प्रत्येक मांसाहारी उत्पाद में शाकाहारी खाद्य की उत्पादन लागत भी शामिल होती है। जैसे अण्डे के उत्पादन में मुर्गी को खिलाये जाने वाले अनाज की कीमत भी शामिल होगी। कुछ व्यक्तियों का मत है कि मछली पालन में कृषि की तुलना में अधिक लाभ होता है। सर्वेक्षण द्वारा पता चला है कि 30 से 40 क्विं. अनाज के उत्पादन में जहाँ मात्र एक हैक्टेयर भूमि की आवश्यकता होती है, वहीं इतनी ही मछलियों के उत्पादन में 4 से 5 हैक्टेयर भूमि में पानी से भरे हुए तालाबों की आवश्यकता होती है। मछलियों के लिए जो बीज डाले जाते हैं, उनकी कीमत 5 से 8 हजार रुपए प्रति क्विंटल तक होती है। इसके बावजूद यदि एक मछली को रोग लग जाता है तो सभी मछलियाँ रोग ग्रस्त हो जाती हैं और उनकी पैदावार नष्ट हो जाती है। इससे आर्थिक हानि तो होती ही है साथ में भूमि भी प्रदूषित होती है। क्योंकि जिन तालाबों में मछली पालन केन्द्र बनाये जाते हैं, वहाँ की भूमि दलदली हो जाती है जो न तो कृषि के लिए उपयुक्त होती है और न ही आवास के लिए।

जिस वस्तु की लागत अधिक होती है उसका विक्रय मूल्य भी अधिक होता है, यह तथ्य नीचे दी गई तालिका से स्पष्ट हो जाता है।

विभिन्न पदार्थों के बाजार मूल्य का विश्लेषण

पदार्थ	विक्रय मूल्य (रु. प्रति कि.ग्रा.)
मांस	80
मछली	40
अण्डा	24
गेहूँ का आटा	7.50
मूँगफली	21.50
सपरेटा दुग्ध चूर्ण	15
बिनौला	8.50
सोयाबीन	5.50
अरहर	20
चना	22

(स्रोत -बार्ले एवं विर्जिग द्वारा लिखित प्रलेख)

तालिका से स्पष्ट है कि जहाँ मांस का बाजार मूल्य 80 रु. प्रति किलो हैं, वहीं आटा 7.50 रु. किलो, अरहर दाल 20 रु. किलो, चना 22 रु. किलो ही मिल जाता है। सभी तरह की सब्जियाँ 5 से 15 रु. प्रति किलोग्राम प्राप्त हो जाती हैं।

इसी संदर्भ में जब छतरपुर के कुछ मांसाहारी भोजनालयों से लागत संबंधी जानकारी एकत्रित की, तो प्रमुख शाकाहारी एवं मांसाहारी व्यंजनों के मूल्यों में भारी अन्तर पाया। जिसका तुलनात्मक विश्लेषण तालिका में प्रदर्शित किया गया है-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विभिन्न व्यंजनों की कीमत

		पदार्थ	मूल्य (रु.)
1.	**शाकाहारी पदार्थ**	सब्जी(प्रति प्लेट)	12.00
		दाल फ्राई (प्रति प्लेट)	8.00
		रोटी-तंदूरी (प्रति रोटी)	1.00
		चावल (प्रति प्लेट)	12.00
		भोजन प्रति थाली	**15 से 20 रुपये**
2.	**मांसाहारी पदार्थ**	मुर्गा (प्रति प्लेट)	40.00
		मीट (प्रति प्लेट)	30.00
		मछली (प्रति प्लेट)	30.00
		अण्डाकरी (प्रति प्लेट)	18.00
		भोजन प्रति थाली	**50 से 60 रु.**

इस तरह जहाँ एक शाकाहारी व्यक्ति 15 रु. खर्च करके सरलता से एक वक्त का स्वादिष्ट एवं पौष्टिक भोजन कर सकता है, वहीं एक मांसाहारी व्यक्ति को एक वक्त के भोजन के लिए कम से कम 50 रु. खर्च करने पड़ते हैं। उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि आर्थिक दृष्टि से मांसाहार घाटे का सौदा है।

पोषणता की दृष्टि से शाकाहार एवं मांसाहार

व्यक्ति का स्वास्थ्य उसके पोषण पर निर्भर करता है। भोज्य पदार्थों में पोषक तत्त्व समान रूप से नहीं पाये जाते हैं। सन्तुलित भोजन वह होता है जिसमें ऊर्जा देने वाले पदार्थ, शरीर संवर्धन करने वाले पदार्थ और सुरक्षात्मक पदार्थ उचित मात्रा में हों। अत: सन्तुलित आहार में (1) कार्बोज या कार्बोहाइड्रेट (2) वसा या स्निग्ध पदार्थ, (3) प्रोटीन, (4) विटामिन, (5) खनिज लवण। इन पाँच तत्त्वों के अलावा सेल्यूलोज की भी थोड़ी मात्रा में आवश्यकता होती है।

कुछ व्यक्तियों का मानना है कि मांस में प्रोटीन अधिक होता है। उसमें प्रोटीन के दस अमीनो ऐसिड एक साथ पाये जाते हैं, जबकि वानस्पतिक पदार्थों में सभी पदार्थों में सभी अमीनो एसिड की मात्रा बराबर अनुपात में नहीं होती है।

शोध के दौरान यह पता चला है कि उपर्युक्त धारणा गलत है। दूध, दही, पनीर आदि में प्रोटीन के दसों अमीनो एसिड एक साथ और मांसाहार की तुलना में अधिक पाये जाते हैं, सोयाबीन में उपलब्ध सभी एमीनो एसिड की मात्रा मांस से भी अधिक होती है तो फिर प्रोटीन के लिए पशुओं की हत्या का औचित्य ही कहाँ रहता है? यदि हम सभी शाकाहारी एवं मांसाहारी पदार्थों का उनसे मिलने वाले पोषण तत्त्व के सन्दर्भ में तुलनात्मक विश्लेषण करें तो स्थिति कुछ इस प्रकार रहती है-

विभिन्न पदार्थों में जलीय अंश, प्रोटीन, वसा, कार्बोज तथा कैलोरी के तुलनात्मक मूल्य

पदार्थ मात्रा प्रति 10 ग्राम	जलीय अंश %	वसा %	प्रोटीन %	कार्बोहाईड्रेट %	कैलोरी प्रति 10 ग्राम
शाकाहारी पदार्थ					
1	2	3	4	5	6
1. पनीर	40	24	24	6	348
2. मूँगफली	4	39	31	19	561
3. अखरोट	23	51.5	12.5	4.5	532
4. गेहूँ का आटा	13	2.3	9	68	330
5. चावल	12	1	6	78	346
6. चना	11.5	5.2	25.5	60	372
7. मूँग					
8. उड़द					
9. मैथी	13.7	5.8	26.2	44.1	333
10. बादाम	5.2	59.6	20.8	10.5	655
11. दूध पाउडर	4.1	0.1	38.0	51.5	857
12. बाजरा	12.4	5.0	11.6	67.1	368
13. गुड़	3.9	0.1	0.4	95.0	390
मांसाहारी पदार्थ					
1. अण्डा	74	11.5	12.5	0.9	157
2. मछली	78	0.6	23	-	91
3. चिकन (मुर्गे का मांस)	72	0.6	26	-	109
4. पोर्क (सुअर मांस)	40	48	11	-	476
5. मटन (बकरे का मांस)	71	13	16	-	271
6. बीफ (गौमांस)	59	23	16	-	271

(स्त्रोत : निरामिष आहार वैज्ञानिक विवेचन जगदीश्वर जौहरी)

इस तरह मांसाहार में शाकाहार की अपेक्षा मात्र जलीय अंश ही अधिक होते हैं, जिनकी शरीर में पहले से ही पर्याप्त मात्रा होती है। जबकि प्रोटीन एवं कैलोरी शाकाहार में कहीं अधिक होती है। कार्बोहाईड्रेट तो मात्र अण्डे में ही होता है, वह भी अत्यन्त अल्प मात्रा में।

पोषक तत्त्वों के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि रक्त में अम्लता न बढ़े। इसके लिए क्षारकारक पदार्थों की मात्रा भोजन की कुल मात्रा की कम-से-कम आधी होनी चाहिए। सभी मांसाहारी पदार्थ अम्लकारक होते हैं, जबकि फल, सब्जियाँ, अंकुरित अनाज व दालें आदि रक्त का क्षारीय सन्तुलन बनाये रखती हैं।

इस तरह हम शाकाहारी पदार्थों से जितनी पोषणता प्राप्त कर सकते हैं, उतनी मांसाहार से कभी प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मांसाहारी व्यक्ति अधिक धन व्यय करके कम पोषणता प्राप्त करता है, जबकि शाकाहारी व्यक्ति न्यूनतम खर्च से अधिकतम पोषणता प्राप्त करता है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से शाकाहार और मांसाहार

भोजन ऐसा होना चाहिए तो तन और मन दोनों को स्वस्थ रखे। रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करे एवं रोगवाहक कीटाणुओं से रहित हो। इस कसौटी पर शाकाहारी वस्तुओं एवं मांसाहारी वस्तुओं को परखा जाये तो निश्चित तौर पर मांसाहार ये शर्तें पूरी नहीं करता।

स्वयं वध करके या अन्य व्यक्तियों द्वारा वध किये हुए पशुओं का मांस खानेवाले की अन्तरात्मा खिन्न व क्षुब्ध तो रहती ही होगी, फिर ऐसा भोजन तन व मन को स्वस्थ कैसे रख सकता है।

स्वभावत: फलाहारी होने के कारण मानव का पाचन संस्थान मांसाहार के अनुकूल नहीं है। इसलिये मांसाहार मनुष्य के स्वास्थ्य के अनुकूल नहीं होता है। मांसाहार से शरीर में पहुँचने वाला एक उल्लेखनीय पदार्थ है- 'यूरिक ऐसिड'। जो रक्त में मिलकर उसकी अम्लता को बढ़ाता है, जिसके कारण हड्डियों एवं गुर्दों से सम्बन्धित रोग उत्पन्न होते हैं।

विश्वविख्यात हड्डी रोग विशेषज्ञ **डॉ. के.टी. ढोलकिया** के अनुसार मांसाहार रक्त की अम्लता को बढ़ाता है, जो धीरे-धीरे हड्डियों के खनिज तत्त्व का ह्रास करता है। इससे हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं।

उच्च रक्तचाप आदि हृदय रोगों के जाने-माने विशेषज्ञ **डॉ. आर.डी. लेले** के मुताबिक शाकाहारियों में मांसाहारियों की तुलना में रक्त चाप को नियन्त्रित रखने की प्रवृत्ति अधिक होती है। उनके अनुसार हम अपने भोजन को दूध और शाकाहार में बदल दें, तो उच्च तनाव, दिल का दौरा और हृदय संवहनी जैसे रोगों की घटनाएँ कम कर सकते हैं।

प्रसिद्ध मधुमेह रोग विशेषज्ञ **डॉ. एच.डी. चण्डारिया** के अनुसार मधुमेह से ग्रसित व्यक्ति के आहार में चर्बी की मात्रा कम और रेशों व काबोहाईड्रेट की मात्रा अधिक होनी चाहिये, जो अनाज व दालों से ही प्राप्त होती है और दोनों प्रकार के मधुमेह को नियन्त्रित करने में सहयोगी है।

कैंसर रोग विशेषज्ञ **डॉ. एस. यू. नागरिकत्वि** के अनुसार बड़ी आँत के कैंसर का सम्बन्ध निरन्तर पशु प्रोटीन लेने से जुड़ा है। हवाई में गोमांस का अधिक सेवन करने से तथा जापान में सुअर मांस निरन्तर लेते रहने से वहाँ के नागरिकों में आँत के कैंसर की घटनाएँ अधिक देखी गई हैं।

इस तरह हम कह सकते हैं कि स्वास्थ्य की दृष्टि से शाकाहार एक सर्वोत्तम आहार है। सर्वेक्षण के दौरान यह बात भी सामने आई है कि अधिकांश डाक्टर्स अपने मरीजों को शीघ्र रोग मुक्त होने के लिए हल्का-फुल्का शाकाहारी भोजन लेने की सलाह देते हैं एवं मांसाहार को सदैव के लिये त्यागने की नेक सलाह देते हैं। जो डाक्टर्स अपने मरीजों को अण्डा-मछली खाने की सलाह देते हैं, वह इसलिए अनुचित है क्योंकि मरीज पर दवाओं के आर्थिक बोझ के साथ-साथ महँगे मांसाहार का अधिक बोझ तो बढ़ता ही है साथ ही अण्डा, मछली खाने से होने वाले रोग उसे अतिरिक्त रूप में मिलते हैं। प्रकृति ने इतने शाकाहारी पदार्थ उत्पन्न किये हैं, जो मांस आदि के स्थान पर लेने से वह उद्देश्य पूरा कर सकते हैं, जिसके लिए मांसाहार की सलाह दी गई है। अत: ऐसे डाक्टर्स को अण्डा, मछली आदि खाने की बेतुकी सलाह देने से बचना चाहिए।

यह चौंकाने वाली महत्त्वपूर्ण बात है कि संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार रक्षा बजट में जितने रुपये खर्च करती थी, उससे भी अधिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में हार्टअटैक जैसे गंभीर रोगों से निजात पाने के लिए करती थी। जब वहाँ के नागरिकों को इंग्लैण्ड की संस्था **'प्यूपिल फॉर द एथिकल ट्रीटमेण्ट ऑफ एनिमल (पेटा)'** ने शाकाहार की गुणवत्ता को समझाया तो लाखों लोग शाकाहार को स्वीकार करने लगे। इंग्लैण्ड सहित रूस, पश्चिम जर्मनी, जापान, स्विट्जरलैण्ड, इजराइल और मेक्सिको में अधिक-से-अधिक लोगों का शाकाहारी भोजन की ओर झुकाव हो रहा है।

भारतवर्ष जिसे विश्व का गुरु कहा जाता था, जिसकी अहिंसामूलक संस्कृति हमेशा से ही शाकाहार की पक्षधर रही है। जहाँ के सभी धर्मों ने मांसाहारी जीवनशैली को हमेशा नकारा है, कुछ नागरिक मांसाहार के पौष्टिक होने के गलत विश्वास पर मांसाहार को अपना रहे हैं। यदि वे शाकाहार को अपना लेते हैं तो स्वास्थ्य के गिरते स्तर को, पर्यावरण के गिरते स्तर को एवं जानवरों की पीड़ा को कम किया जा सकता है।

मित्र, मांस को तजकर उसका, उत्पादन तुम आज घटाओ।
बनो, अहिंसक शाकाहारी मानवता का मूल यही है।
पशु भी मानव-जैसे प्राणी, वे मेवा, फल, फूल नहीं हैं।

C/o डॉ. भूषण चन्द्र जैन
जैन (परवारी) मुहल्ला
छतरपुर (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राकृतिक चिकित्सा परिचय

डॉ. रेखा जैन

मानव शरीर एक अनुपम कृति है। इसे पूर्ण स्वस्थ एवं ओजपूर्ण रखना हर व्यक्ति, समाज एवं देश का दायित्व है। सरकारी घोषणाएँ अनेक बार हो चुकी हैं कि अमुक समय तक देश के प्रत्येक व्यक्ति को स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध हो जाएँगी। लेकिन वास्तविकता यह है कि अभी निकट भविष्य में दूर-दूर तक ऐसी कोई सम्भावना दिखाई नहीं दे रही है। अनेक बीमारियों को जड़ से समाप्त कर दिये जाने के दावे कई बार हो चुके हैं, किन्तु ऐसे दावों में कोई सच्चाई नहीं है। समय के साथ-साथ चिकित्सा विज्ञान का भी विकास होता चला गया। विश्व के अनेक भागों में अनेकों पद्धतियाँ विकसित हुईं, जिनमें पश्चिमी ऐलोपैथी को आजकल सर्वाधिक महत्त्व मिला हुआ है, लेकिन ऐलोपैथी ने मनुष्य को एक भिन्न इकाई की भाँति देखा है। प्रकृति से अलग, यह सबसे बड़ी भूलों में से एक है जो की गई है। मनुष्य प्रकृति का हिस्सा है। उसका स्वास्थ्य और कुछ नहीं, प्रकृति के साथ सहज होना है। ऐलोपैथी कुछ क्षेत्रों जैसे सर्जरी, अंग-प्रत्यारोपण एवं संक्रमण इत्यादि में कारगर है, लेकिन शरीर की प्रतिरोधी क्षमता में ह्रास, तीव्र साइड इफेक्ट्स एवं आफ्टर इफेक्ट्स आदि ऐलोपैथी के कुछ ऐसे दोष सुस्थापित हो चुके हैं, जिनके फलस्वरूप मनुष्य अपनी प्राचीनतम, श्रेष्ठ, निरापद, शाकाहार एवं अहिंसात्मक, प्राकृतिक चिकित्सा की ओर आशा भरी नजरों से देखने के लिए बाध्य हो गया है।

हम किसी व्यक्ति का रोग दूर भी कर दें तो इसका अर्थ यह नहीं कि वह स्वस्थ हो गया है। रोग की अनुपस्थिति स्वास्थ्य नहीं है, यह एक नकारात्मक परिभाषा है। स्वास्थ्य में कुछ और सकारात्मक होना चाहिए, क्योंकि स्वास्थ्य एक सकारात्मक अवस्था है। स्वास्थ्य शुद्धचित्तता का भाव है। सम्पूर्ण शरीर बिना बाधा के अपने चर्मोत्कर्ष पर कार्य करता रहे, एक निश्चित लयबद्धता का अनुभव हो, अस्तित्व के साथ एक निश्चित सकारात्मकता का भाव हो यही स्वास्थ्य है।

जटिल संतुलन - एक छोटा सा व्यक्ति भी उतना ही जटिल है, जितना यह पूरा ब्रह्माण्ड। उसकी जटिलता में कोई कमी नहीं है और एक लिहाज से ब्रह्माण्ड से भी ज्यादा जटिल हो जाता है, क्योंकि व्यक्ति का विस्तार बहुत कम है और जटिलता ब्रह्माण्ड जितनी विशाल है। एक साधारण से शरीर में सात करोड़ जीव कोष हैं, एक छोटे से मस्तिष्क में कोई तीन अरब स्नायुतंतु हैं। यह सारा का सारा जो इतनी बड़ी व्यवस्था का जाल है, इस व्यवस्था में एक संगीत, एक लयबद्धता, प्रफुल्लता, आनंद, छन्दोबद्धता एवं हारमोन्स अगर न हों तो शरीररूपी बस्ती अराजक एवं अव्यवस्थित हो जाएगी, जिसे रोग कहते हैं।

शरीर स्वयं एक बहुत बड़ा चिकित्सक एवं उपचारक है। उसके अंग-प्रत्यंग स्वचलित दवाओं का फार्मास्युटिकल उद्योग है, जो आवश्यकतानुसार श्रेष्ठतम किस्म की औषधियों का निर्माण करता है। सबसे बड़ी दवा की फैक्टरी है गुर्दे (Kidney), जो पाँच सौ प्रकार की दवाइयाँ निर्माण करते हैं। एक तरफ रक्तस्राव होने पर रक्त का थक्का बनाने वाली कोएगुलेन्ट दवा फाइब्रिनोजन तथा प्रोथोम्बिन का निर्माण करती है, वहीं रक्त वाहिनियों में रक्त जमे नहीं, इसके लिए एंटी कोएगुलेन्ट दवा हिपेरिन बनाती है। यह रक्त में उपलब्ध अतिरिक्त ग्लुकोस को ग्लाइकोजन में बदलकर आपातकाल के लिए जमा रखती है। इसके अतिरिक्त यह एमिनो-एसिड को अमोनिया तथा अंत में यूरिया के रूप में बदलकर पेशाब(Urine) के रूप में बाहर करती है, अन्यथा संधिवात गुर्दे क्षतिग्रस्त हो सकते हैं।

इतना ही नहीं, यकृत (Liver)इमरजेंसी हेतु विटामिन A,B,D तथा K को अपने में सुरक्षित रखता है, कोलेस्ट्राल को नियंत्रित करता है। पेनक्रियाज दर्जनों औषधियों का निर्माण करता है। इसके द्वारा निर्मित एक औषधि इन्सुलिन की कमी हो जाती है तो मधुमेह रोग हो जाता है। दिमाग,प्लीहा, आमाशय, छोटी-आँत, बड़ी आँत, फेफड़े, हृदय, गुर्दे, थायराइड, पैरा थायराइड, पिट्यूटरी, गोनाड्स, एड्रिनल, अस्थि-मज्जा, यानी सभी अंग-प्रत्यंग हजारों-लाखों किस्म की औषधियों का निर्माण करते हैं। इन औषधियों का निर्माण हमारे आहार-विहार तथा चिन्तन द्वारा होता है। इन फैक्ट्रियों के ये कच्चे माल हैं। यदि कच्चा माल यानि आहार-विहार, चिन्तन श्रेष्ठतम किस्म का होगा तो उसका उत्पाद रस, रक्त, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि, वीर्य (रज) तथा ओज भी श्रेष्ठतम होगा।

आहार-विहार तथा चिंतन के तल पर जब हम लगातार गल्ती करते चले जाते हैं, तब उस अवस्था में विजातीय दूषित विकार Foriegn-Matter/Toxic Matter/Morbid Matter शरीर में सहनीय क्षमता से अधिक बनने लगता है। विकार की अधिकता के कारण विषनिष्कासन अंगों की क्षमता भी जवाब देने लगती है। ऐसी स्थिति में प्रबल जीवनी शक्ति (Vital-Power)तीव्र ज्वर, रोग, जुकाम, इन्फ्लुएंजा, दस्त, दर्द, उल्टी, फोड़ा-फुंसी तथा खाँसी आदि के रूप में उस विकार को निकालकर शरीर को स्वच्छ एवं स्वस्थ बनाने का प्रयास करती है।

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में दवाई का कोई स्थान नहीं है। दवाएँ रोग दबा देती हैं। एक रोग ठीक होने का भ्रम देकर अनेक रोगों को पैदा करती हैं। हमारा शरीर पंच महाभूतों से बना है। इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा विधि में पंच महाभूतों के विविध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रयोग मिट्टी, पानी, धूप, हवा, आकाश, मालिश, व्यायाम, आसन, प्राणायाम, ध्यान आहार तथा विश्राम द्वारा रोग का उपचार किया जाता है। लेकिन मिट्टी, पानी, धूप, हवा को दवा समझना भूल तथा भ्रम है। ये पंच महाभूत शरीर के विकारों को हटाकर जीवन शक्ति को बढ़ाते हैं। आदतों को सुधार कर स्वास्थ्य प्रदान करते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा जीवन रूपान्तरण का विधान है। दवाओं से जीवन सुधर नहीं सकता। जैसे अजीर्ण होने पर दवा लेने से अजीर्ण से राहत तो मिल जाती है, परन्तु मूल कारण ज्यादा तथा गरिष्ठ खाने की जीभ लोलुपता से मुक्ति नहीं मिलती है। दवा हमें राहत देती है तथा ज्यादा खाकर और अधिक बीमार होने के लिए प्रोत्साहित करती है। औषधियों से स्वास्थ्य मिलता तो दवा निर्माण करने वाले, दवा लिखने वाले तथा दवा बेचने वाले खूब स्वस्थ होते। स्वास्थ्य पर भी पूँजीपतियों का एकाधिकार होता।

अच्छा स्वास्थ्य एवं सौदर्य मिलता है प्राकृतिक योगमय जीवन जीने से। प्राकृतिक जीवन एवं पद्धति जो सरल, निरापद एवं उपयोगी है, उसके नियमों का पालन अपनी आदतों में शामिल कर लिया जाये तो एक सुन्दर, स्वस्थ एवं उद्देश्यपूर्ण जीवन सहजता से जिया जा सकता है।

भाग्योदय तीर्थ
प्राकृतिक चिकित्सक
सागर (म.प्र.)

राजुल-गीत

श्रीपाल जैन 'दिवा'

1

सखी मन उलझा चिंतन-जाल।
सखी मन उलझा चिंतन-जाल ।
पुरुष सिंह से नीचे मन को, भाये कोई न चाल।
चमक दामिनी लोप हो गई, चमके कैसे भाल।
आभूषण अंगार हो गए, अम्बर अग्नि ज्वाल।
प्राण तपे ज्यों घट आवा में, मैं तो हो गई लाल।
बड़ा अचम्भा बिना मिलन के, विरह बना है काल।
सुमन गात मसृण वेदन का, मत पूछो तुम हाल।

2

राजुल मन को सरल करो।
सखी री मन को सरल करो।
जग वैभव चरणों को चूमे, कमी न, धीर धरो।
कौन अभाव जगत में तुम हित, सुमन न आग भरो।
स्वयं विचारो स्वयं करो निज हित का ध्यान धरो।
माँ के उर का टूक, टूक तुम, उर के नहीं करो।
चाहा वो मिल जाय अनिश्चय, दूजा भाव धरो।
प्राण स्नेह शीतल छाया जग, मिले चाह तो करो॥

शाकाहार सदन
एल. 75, केशर कुंज,
हर्षवर्द्धन नगर, भोपाल - 3

मेरी भाव-धारा कहती

डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर'

1

आशा लेकर महावीर प्रभु! दरवाजे पर आया हूँ ।
अपनी नौका छोड़ किनारे, पार माँगने आया हूँ॥
सागर में डूबा उतराया, बचने की उम्मीद नहीं।
तूफानों और हवाओं ने बस, जीर्ण-शीर्ण नौका कर दी॥

2

सारे दीपक नभ के साये, अंधकार में तैरा हूँ।
पतवार नहीं है पास हमारे, हाथ पैर यों मारा हूँ॥
आज तुम्हारा दर्शन पाया, दीपक ज्योति जगी है।
श्रद्धा स्नेह भरा है उसमें, निष्कंपनता ऊगी है॥

3

साहस बटोरकर आया हूँ, फिर नई साँस उभरी है।
चक्कर खाली नाव देखता, पार सही पहुँची है॥
आँखें नीचे हो जायेंगी, चेतनता जाग उठी है।
तेरा वचन नहीं विसरेगा, बातें गहरी पैठी हैं ॥

4

ये विचार बबूले पानी के, हरदम उठते रहते हैं।
निर्विकार जब चित्त बनेगा, निस्तरंग हो जाते हैं॥
परमात्मा नहिं काबा में, नहिं कैलाशी, काशी में।
वह बैठा तेरे ही भीतर, पा सकते हो इक झटके में॥

तुकाराम चाल, सदर, नागपुर 440001 (महाराष्ट्र)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

जिज्ञासु : श्री एस.एल. जैन, भोपाल

पं. रतनलाल बैनाड़ा

जिज्ञासा- जो जीव सम्यग्दर्शन होने से पूर्व नरक का बंध कर लेते हैं, सम्यक्दर्शन होने पर वे प्रथम नरक तक ही उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार तिर्यंच और मनुष्य पर्यायों का बंध होने पर वे भोग भूमियों में ही उत्पन्न होते हैं। यह व्यवस्था मात्र क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त करने वाले जीवों के लिए है। कृपया स्पष्ट करें कि क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि जीवों के लिए आगम में क्या व्यवस्था बताई गई है ?

समाधान- सम्यग्दर्शन तीन प्रकार का होता है। 1. उपशम, 2. क्षायोपशमिक, 3. क्षायिक। इनमें से उपशम सम्यकत्व में तो मरण होता ही नहीं। क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव यदि मरण से पूर्व आयु नहीं बाँध चुके हैं तो नियम से देव पर्याय ही प्राप्त करते हैं। यदि बद्धायुष्क हों तो पहले नरक तक तिर्यंचों में भोग भूमिया पर्याय को और मनुष्यों में भी भोगभूमि में ही उत्पन्न होते हैं। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव यदि बद्धायुष्क तिर्यंच या मनुष्य है और उसको देव आयु के अलावा अन्य आयु का बंध हो गया है तो मरण समय उसका सम्यक्त्व छूट जाता है और वह बाँधी हुई आयु के अनुसार गति प्राप्त करता है।

परन्तु यदि क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य दर्शनमोह की क्षपणा को प्रारंभ करके कृतकृत्य वेदी हो गया हो और कृतकृत्यवेदी अवस्था में ही उसका मरण हो जाये तो वह क्षायिक सम्यक्दृष्टि की तरह पहले नरक तक अथवा तिर्यंच और मनुष्यों में भोगभूमिज बनता है। देवायु बँधी होने पर तो दोनों सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्व सहित देवगति को प्राप्त होते हैं।

उपर्युक्त चर्चा से स्पष्ट है कि तिर्यंच और मनुष्य पर्यायों का मरण पूर्व बंध होने पर जिस प्रकार क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव भोगभूमि में उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार कृतकृत्यवेदी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव भी पैदा होते हैं। सामान्य क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव के लिये यह नियम नहीं है। सभी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि नारकी, देव और मनुष्य ही बनते हैं।

जिज्ञासा - क्या तीर्थंकर नामकर्म का बंध होने के लिए केवली या श्रुतकेवली का सान्निध्य अनिवार्य है ? और यदि अनिवार्य नहीं है तो क्या पंचमकाल में भी जीवों के इतनी विशुद्धि संभव है ? कृपया स्पष्ट करने का कष्ट करें।

समाधान - तीर्थंकर प्रकृति के बंध के लिये केवली अथवा श्रुतकेवली का पादमूल आवश्यक होता है, जैसा कि श्री कर्मकाण्ड गाथा-93 में कहा है-**'तित्थयर बंध पारंभयाणरा केवलि दुगन्ते'** अर्थ - तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ मनुष्य ही, केवली अथवा श्रुतकेवली के पादमूल में करते हैं। भावार्थ- केवलिद्वय के पादमूल का नियम इसलिये है कि अन्यत्र उस प्रकार की परिणाम विशुद्धि नहीं हो सकती, जिसमें तीर्थंकर प्रकृति का बंध प्रारंभ हो सके।

उपर्युक्त केवलिद्वय के पादमूल का नियम केवल उपर्युक्त श्री कर्मकाण्ड की गाथा के अलावा अन्य सिद्धान्त ग्रन्थ श्री कषाय पाहुड अथवा श्री षटखण्डागम या आ. कुन्द कुन्द रचित शास्त्रों में और उनकी टीकाओं में प्राप्त नहीं होता है। इसी वजह से वर्तमान के कुछ आचार्यगण एवं विद्वत्गण इस नियम को आवश्यक नहीं मानते। इस सम्बन्ध में यदि कोई अन्य प्रमाण हो तो स्वागत योग्य है। जहाँ तक पंचमकाल में तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रसंग है, भगवान् महावीर के निर्वाण के 12 वर्ष में श्री गौतम गणधर, अगले 12 वर्ष में श्री सुधर्माचार्य और अगले 38 वर्षों में श्री जम्बूस्वामी केवली हुए। इसके उपरान्त विष्णु, नन्दि, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु महाराज अगले 100 वर्षों में हुए, जो श्रुतकेवली थे, क्योंकि केवली और श्रुतकेवली के पादमूल में तीर्थंकर प्रकृति का बंध संभव है। अत: श्रुतकेवली भद्रबाहु महाराज के समय तक तो (अर्थात् भगवान् महावीर के निर्वाण गमन के बाद) तीर्थंकर प्रकृति का बंध उपर्युक्त श्री कर्मकाण्ड के प्रमाणानुसार पंचमकाल में भी संभव था। वर्तमान में संभव नहीं है, क्योंकि उपर्युक्त कथनानुसार केवलिद्वय के पादमूल बिना तीर्थंकर प्रकृति के बंधयोग्य विशुद्धि संभव नहीं। अन्य विचारधारा के अनुसार कथंचित संभव है।

जिज्ञासा - छहढाला के विभिन्न संस्करणों में अन्तरात्मा के भेद बताने के लिये 'देशव्रती अनगारी' और 'देशव्रती अगारी' दो पाठ पाये जाते हैं। यदि अनगारी पाठ ठीक है, तब छठें गुणस्थान महाव्रती प्रमत्त संयत मुनि महाराज मध्यम अन्तरात्मा कहलावेंगे। सकल संयम को धारण करने वाले सभी मुनि महाराज छठें-सातवें गुणस्थान में प्रमत्त और अप्रमत्त अवस्था में अल्पतम अन्तर्मुहूर्त तक तो स्थित रहते ही हैं। ऐसी स्थिति में क्या महाव्रती मुनि महाराज को मध्यम और उत्तम अन्तरात्मा की श्रेणी में मानना उचित है, स्पष्ट करने की कृपा करें।

समाधान - उत्तम एवं मध्यम अन्तरआत्मा की परिभाषा विभिन्न शास्त्रों में इस प्रकार कही है - कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा- 195, 196,

पंच-महव्वय-जुत्ता धम्मे मुक्के वि संहिदा णिच्चं।
णिज्जिय-सयल-पमाया, उक्किट्ठा अंतरा होंति॥
सावयगुणेहिं जुत्ता पमत्त-विरदा य मज्झिमा होंति।
जिणहवणे अणुरत्ता उवसमसीला महासत्ता॥

अर्थ -जो जीव पाँचों महाव्रतों से युक्त होते हैं, धर्मध्यान और शुक्लध्यान में सदा स्थित रहते हैं तथा जो समस्त प्रमादों को जीत लेते हैं, वे उत्कृष्ट अन्तरात्मा हैं ॥195॥ श्रावक के व्रतों को पालने वाले गृहस्थ और प्रमत्त गुणस्थानवर्ती 'मुनि मध्यम अन्तरात्मा' होते हैं। ये जिनवचन में अनुरक्त रहते हैं, उपशम स्वभावी होते हैं और महापराक्रमी होते हैं ॥196॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्यसंग्रह टीका 14/ 49 के अनुसार-'क्षीणकषाय 'गुणस्थाने पुनरुत्कृष्टः अविरतक्षीणकषाययोर्मध्ये मध्यमः'-क्षीण कषाय गुणस्थान में उत्कृष्ट अन्तरात्मा है। अविरत और क्षीण कषाय गुणस्थानों के बीच में जो सात गुणस्थान हैं उनमें मध्यम अन्तरात्मा है।

नियमसार टीका 149 के अनुसार - 'जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदादविरतः सुदृक्। प्रथमः क्षीणमोहोन्त्यो मध्यमो मध्यमस्तयोः'

अर्थ : अन्तरात्मा के जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट ऐसे (तीन) भेद हैं। अविरत सम्यग्दृष्टि वह प्रथम (जघन्य) अन्तरात्मा। क्षीणमोह अन्तिम अर्थात् उत्कृष्ट-अन्तरात्मा और इन दो के मध्य में स्थित मध्यम अन्तरात्मा है।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि छठे गुणस्थानावर्ती मुनिमहाराज को तो सभी ने मध्यम अन्तरात्मा माना है। कथंचित् सप्तम गुणस्थानवर्ती मुनिराज उत्तम अन्तरात्मा की श्रेणी में आते हैं। मेरा सोचना है कि उपर्युक्त परिभाषाओं के अनुसार सप्तम गुणस्थानवर्ती शुद्धोपयोग में स्थित मुनिराजों को यदि उत्तम अन्तरात्मा में लिया जाये तो बहुत अच्छा रहेगा। किसी भी ग्रन्थ में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि वर्तमान पंचमकाल में शुद्धोपयोग का अभाव है। अतः वर्तमान काल में महाव्रती मुनियों को मध्यम और उत्तम अन्तरात्मा दोनों श्रेणियों में मानना उचित ही है।

जहाँ तक छहढाला के विभिन्न संस्करणों में मध्यम अन्तरात्मा की परिभाषा में 'देशव्रती अगारी' और 'देशव्रती अनगारी' ऐसे दो पाठों के मिलने की चर्चा है, उपर्युक्त प्रमाणों के अनुसार 'देशव्रती अगारी' पाठ उचित नहीं लगता, क्योंकि देशव्रती तथा अगारी दोनों शब्द समानअर्थवाची हैं तथा उपर्युक्त आगम प्रमाणों के अनुसार 'अगारी' पाठ स्वीकृत करने पर छठे गुणस्थानवर्ती मुनियों का इसमें समावेश न हो पायेगा, जो उचित नहीं होगा। अतः छहढाला का 'देशव्रती अनगारी' पाठ ही आगमसम्मत मानकर स्वीकृत करना चाहिये।

जिज्ञासा - प्रथमानुयोग के ग्रन्थों के अध्ययन से स्पष्ट है कि कुछ शताब्दियों पूर्व आर्यिका दीक्षा गणिनी माताओं द्वारा ही दी जाती थी। वर्तमान में अधिकांश आर्यिका-दीक्षाएँ आचार्यों द्वारा दी जा रही हैं। कृपया आगम-व्यवस्था स्पष्ट करने का कष्ट करें।

समाधान -आपने अपनी जिज्ञासा में लिखा है कि कुछ शताब्दियों पूर्व आर्यिका दीक्षा गणिनी माताओं द्वारा ही दी जाती थी। इस कथन को यदि इस प्रकार कहा जाये कि चौथे काल में अर्यिकाओं को दीक्षा गणिनी माताओं द्वारा दी जाती थी तो अधिक उचित होगा, क्योंकि समस्त प्रथमानुयोग चतुर्थ काल से ही सम्बन्धित है।

अब मुख्य प्रश्न पर विचार करते हैं।

(1) जहाँ तक, आर्यिकाओं को दीक्षा देने वाले गुरु कैसा होना चाहिये, का प्रश्न है, इसका सीधा समाधान किसी भी श्रमणाचार सम्बन्धी आचार ग्रन्थ में नहीं पाया जाता। श्री मूलाचार आदि ग्रन्थों में यह वर्णन अवश्य पाया जाता है कि आर्यिकाओं के गणधर आचार्य कैसे होने चाहिये, जैसा कि श्री मूलाचार गाथा 183 व 184 में कहा है-

पियधम्मो दढधम्मो संविग्गोऽवज्जभीरु परिसुद्धो।
संगहपुग्गहकुसलो सददं सारक्खणाजुत्तो ॥183॥
गंभीरो दुद्धारिस्सो मिदवादी अप्पदुहल्लेय।
चिरपव्वइदोगिहिदत्थो अज्जाणं गणधरो होदि ॥184॥

गाथार्थ :- जो धर्म के प्रेमी हैं, धर्म में दृढ़ हैं, संवेग भाव सहित हैं, पाप से भीरु हैं, शुद्ध आचरण वाले हैं, शिष्यों के संग्रह और अनुग्रह में कुशल हैं और हमेशा ही पापक्रिया की निवृत्ति से युक्त हैं गम्भीर हैं, स्थिर चित्त हैं, मित बोलने वाले हैं, किंचित् कुतूहल करते हैं, चिर दीक्षित हैं, तत्त्वों के ज्ञाता हैं- ऐसे मुनि आर्यिकाओं के आचार्य होते हैं।

ऐसा ही वर्णन अन्य ग्रन्थों में भी पाया जाता है। किसी भी श्रमणाचार सम्बन्धी उपलब्ध ग्रन्थ में ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि गणिनी को ही आर्यिका दीक्षा देनी चाहिये। उपर्युक्त प्रमाण से तो ऐसा प्रतीत होता है कि इन गुणों वाले आचार्य आर्यिकाओं को दीक्षा देने वाले होने चाहिये। (2) यह सत्य है कि प्रथमानुयोग के ग्रन्थों के अनुसार आर्यिका दीक्षाएँ अधिकांश रूप से गणिनी आर्यिकाओं द्वारा ही दी जाती थीं। लेकिन मुनिराजों द्वारा भी आर्यिका दीक्षा देने के प्रमाण शास्त्रों में उपलब्ध होते हैं।

1. सुदर्शनादेय नवम सर्ग काव्य नं. 74 में इस प्रकार कहा है:-

इत्येवं वचनेन मार्दववता मोहोस्तभावं गतः,
यद्वद्गारुडिनः सुमन्त्रवशतः सर्पस्य सर्पो हतः।
आर्या त्वं स्म समेति मण्यललना दासीसमेतान्वितः
स्वर्णत्वं रसयोगतोऽत्र लभते लोहस्य लेखा यतः॥

इस प्रकार सुदर्शन मुनिराज के सुकोमल वचनों से उस देवदत्ता वेश्या का मोह नष्ट हो गया, जैसा कि गारुडी (सर्प-विद्या जानने वाले) के सुमंत्र के वश से सर्प का दर्प नष्ट हो जाता है। **पुनः दासी-समेत वारांगना देवदत्ता ने उन्हीं सुदर्शन मुनिराज से आर्यिका के व्रत धारण किये। सो ठीक ही है,** क्योंकि इस जगत् में लोहे की शलाका भी रसायन के योग से सुवर्णपने को प्राप्त हो जाती है।

2. श्री सुदर्शनचरितम् (अनेकान्त विद्वत् परिषद् प्रकाशन) पृष्ठ-87 पर इस प्रकार लिखा है:-

सेठ रिषभदास की सेठानी जिनमति ने समाधिगुप्ति मुनिराज से आर्यिका दीक्षा ले ली।

3. श्री पद्मपुराण भाग-1, पृष्ठ 453 पर कहा है-'भाई के स्नेह से भीरु मनोदया ने भी बहुत भारी संवेग से युक्त हो, गुणसागर नामक मुनिराज के पास दीक्षा ले ली।'

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि चतुर्थकाल में भी मुनिराजों द्वारा आर्यिका दीक्षा देने के प्रमाण शास्त्रों में उपलब्ध हैं।

अतः वर्तमान में आचार्यों द्वारा आर्यिका दीक्षा देना आगम सम्मत ही मानना चाहिये।

1/205, प्रोफेसर्स कालोनी
आगरा (उ. प्र.)- 282002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बालवार्ता

लोभ से परे है समयसार

डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती'

मेरे प्यारे बच्चो !

आपने कभी सुना होगा कि लोभ पाप का बाप है। जो लोभ हमें सुखपूर्वक जीने, खाने, पीने भी नहीं देता, वह कभी अच्छा हो भी नहीं सकता। जो संसार में सुख चाहते हैं, उन्हें लोभ या लालच छोड़ना ही पड़ेगा। वरना वह शहद में फँसी मक्खी की तरह मृत्यु की गोद में चला जायेगा। नीतिकार तो कहते हैं कि-

साईं इतना दीजिए, जामैं कुटुम समाय।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय॥

आजकल अपने जैन समाज में आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव द्वारा रचित 'समयसार' ग्रन्थ पढ़ने के प्रति एक वर्ग में बड़ी आग्रही सोच है। वे सोचते हैं और उन्हें समझाया भी यही जाता है कि बस, एक 'समयसार' पढ़ लो तो नैया पार हो जायेगी। ऐसे ही लोगों के लिए यह कहानी है जिसे आप पढ़ें, सुनें और निर्णय करें कि पहले लोभ छोड़ें कि पहले 'समयसार' पढ़ें ?

एक बार सोमपुर के राजा सोमसेन ने घोषणा की कि जो व्यक्ति या विद्वान् मुझे 'समयसार' समझा देगा, उसे मैं अपना आधा राज्य दे दूँगा। आधा राज्य कोई कम नहीं होता, फिर जो राजा को देखने के ही सपने देखते हों उन्हें आधा राज्य मिलने की कल्पना से ही रोमांच होने लगता है। जब ऐसे लोगों को राजा की घोषणा पता चली तो अनेक ज्ञानी पण्डित 'समयसार' सिर पर लिए हुए राजा के पास आये और राजा को 'समयसार' समझाने लगे, किन्तु वे सफल नहीं हो सके। जब भी वे विद्वान 'समयसार' को पूरी तरह समझाने का दावा करते, राजा कुछ-न-कुछ मीन-मेख निकालकर कहता कि "पण्डित जी। आपने मेहनत तो खूब की, पर मैं आपके समझाने से सन्तुष्ट नहीं हूँ। लगता है, अभी भी 'समयसार' में कुछ सार शेष है, जहाँ तक आपकी बुद्धि नहीं पहुँच पा रही हैं।"

राजा के इस कथन को सुनकर पंडितगण निराश हो जाते। वे पुनः 'समयसार' समझाते, किन्तु राजा आधे राज्य के बारे में सोचकर कुछ न कुछ नया प्रश्न खड़ाकर निरुत्तर कर देता।

कुछ समय पश्चात् एक महापण्डित धर्मशील आये और उन्होंने राजा के पास जाकर निवेदन किया कि-"राजन्! अगर आपकी आज्ञा, हो तो मैं आपको 'समयसार' समझाना चाहूँगा।"

राजा ने कहा , "महापंडित, आप व्यर्थ ही परेशान हो रहे हैं। आज तक कोई मुझे 'समयसार' नहीं समझा पाया है। मेरा ज्ञान कोई कम नहीं है। मैंने अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया है। एक बार आप और सोच लें कि आपका और हमारा समय बर्बाद न हो।"

महापंडित राजा के उत्तर से अप्रभावित ही रहा और पुनः निवेदन किया कि जहाँ आपने अनेक विद्वानों को अवसर दिये हैं, वहाँ मुझे भी एक अवसर अवश्य दें।

अन्ततः राजा ने भी स्वीकृति दे दी।

शुभमुहूर्त में राजा को 'समयसार' समझाना प्रारंभ किया गया। महापंडित धर्मशील पहले गाथा पढ़ते। राजा को उच्चारण करने के लिए कहते और फिर प्रत्येक शब्द के अन्वय-अर्थ बताते। जब शब्दों का अर्थ समझा लेते तो पदों का और अन्त में भावार्थ समझाते। इस तरह समझाते-समझाते छह वर्ष बीत गये। अब महापंडित धर्मशील को लगा कि मानो उन्होंने राजा को 'समयसार' पूरी तरह समझा दिया है। पूरी तरह आश्वस्त होने पर उन्होंने राजा से कहा-"हे राजन्! मैंने अपने विशिष्ट ज्ञान के बल पर आपको पूरे मनोयोग से 'समयसार' समझा दिया है। अब आपको भी अपनी घोषणा के अनुरूप मुझे अपने राज्य का आधा भाग देकर अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करना चाहिए।"

राजा ने विचार किया कि महापंडित धर्मशील का कहना तो उचित है। मैं 'समयसार' समझ भी चुका हूँ, किन्तु यदि मैं इसे स्वीकार करता हूँ तो मुझे आधा राज्य देकर आधे राज्य से वंचित होना पड़ेगा, क्यों न कोई उपाय सोचा जाये।

जिसके मन में लोभ जागृत हो गया है ऐसा वह राजा कुटिलता की मुस्कान ओढ़कर बोला - "महापंडित, आपने 'समयसार' भले ही समझाकर सन्तुष्टि पा ली हो, किन्तु मैं तो इसी बात पर अटका हूँ कि जो समय जगत् में कालसूचक प्रसिद्ध है वह आत्मा का पर्याय कैसे हो सकता है ? चूँकि मेरे संशय समाप्त नहीं हुए हैं। अतः अपनी घोषणा कैसे पूरी करूँ और क्यों करूँ ?

राजा के इस प्रकार अप्रत्याशित वचन सुनकर महापंडित धर्मशील अपना आपा खो बैठे और जोर से बोले- "राजन्! आप झूठ बोल रहे हैं। आपको आधे राज्य का लोभ जाग गया है इसलिए आप पूरी तरह से समझ जाने के बाद भी नासमझी का ढोंग कर रहे हैं।"

"अधिक वाचाल मत बनो पंडित, जानते नहीं, मैं यहाँ का राजा हूँ। यदि अधिक धृष्टता दिखाई तो सूली पर टँगवा दूँगा। राजा ने गुस्से से कहा और मन में सोचा कि आधा राज्य बचाने के लिए यह क्रोध दिखाना जरूरी है।

यह अप्रिय प्रसंग चल ही रहा था कि एक महायोगी वहाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ पहुँचे। महापंडित धर्मशील एवं राजा सोमसेन, दोनों ने उनसे निवदेन किया कि वे दोनों पक्षों की राय सुनकर कोई निर्णय दें ताकि विवाद समाप्त हो सके। महायोगी उनके कथन से मध्यस्थता करने के लिए सहमत हो गए। उन्होंने सर्वप्रथम राजा सोमसेन से पूछा- ''राजन्! आपने महापंडित धर्मशील के समझाने से 'समयसार' का अर्थ समझा कि नहीं?''

राजा ने कहा-''योगीराज, नहीं। मैंने तो कुछ भी नहीं समझा, यहाँ तक कि मैं समय को भी नहीं समझ सका।'' राजा ने मानो अपना पूर्व कथन ही दुहरा दिया।

योगीराज ने फिर महापंडित धर्मशील की ओर मुखातिब होकर कहा-''पंडित जी। क्या आपने राजा को 'समयसार' का अर्थ अच्छी तरह समझा दिया है?''

महापंडित धर्मशील ने परम सन्तुष्ट भाव से कहा-''हाँ, योगीराज! मैंने 'समयसार' की प्रत्येक गाथा के एक-एक शब्द, पद के अर्थ एवं भाव समझाये हैं, किन्तु राजा है कि आधे राज्य के लोभ में मानने को तैयार ही नहीं हैं कि उन्हें 'समयसार' पूरी तरह समझ में आ गया है।''

दोनों के उत्तर सुनकर महायोगी ने कुछ चिन्तन किया और बोले कि हे महापंडित , मुझे तो ऐसा लगता है कि आपने अभी भी 'समयसार' का अर्थ नहीं समझा, अन्यथा आप आधे राज्य के लोभ में नही पड़ते । धिक्कार है ऐसे ज्ञान को, जो अर्थ के लिए लालायित रहता है। हे राजन्। आपने भी अर्थ नहीं समझा, अन्यथा आधे राज्य के लोभ में आकर आप भी झूठ नहीं बोलते। किसी के श्रम का मूल्य नहीं चुकाना घोर शोषण है, पाप है, अत्याचार है जो आप जैसे राजपद पर अधिष्ठित व्यक्ति को शोभा नहीं देता।"

महायोगी के युक्त विश्लेषण से दोनों की आँखें खुल चुकी थीं। अत: एक ओर राजा 'समयसार' समझाने के बदले महापंडित धर्मशील को आधा क्या पूरा राज्य तक देने के लिए उत्सुक था वहीं महापंडित धर्मशील भी 'समयसार' के सही अर्थ को जान चुका था, अत: आत्महित के आगे संसार की सारी सम्पदा उसे तुच्छ प्रतीत होने लगी थी। उसे तो एक ही विचार मन में आ रहा था- "अप्पाणं शरणं मम।"

कुछ क्षणों के बाद सबने देखा कि राजा और राज्य की ओर पीठ किये हुए महापंडित धर्मशील योगीराज दिगम्बर मुनि के पीछे-पीछे चले जा रहे था, मानो उसे समय और 'समयसार' दोनों की सार्थकता समझ में आ चुकी हो।

एल-65, न्यू इंदिरा नगर, बुरहानपुर (म.प्र.)

जानने योग्य बातें

1. संसार में दो शाश्वत तीर्थ हैं एक-अयोध्या और दूसरा सम्मेद शिखर। अयोध्या में प्राय: सभी तीर्थंकरों का जन्म होता है और सम्मेदशिखर से निर्वाण। हुंडावसर्पिणी काल के प्रभाव से यह क्रम भंग हुआ।

2. बुन्देलखण्ड के यशस्वी संत थे- पूज्य क्षुल्लक गणेशप्रसाद वर्णी, जिन्होंने समय की आवश्यकता पहचानी और कहा- ''आज गजरथ की नहीं, ज्ञानरथ की आवश्यकता है।''

ज्ञानोदय तीर्थक्षेत्र में जैन स्नेहमिलन समारोह सम्पन्न

अजमेर, 29 मार्च, 02। होली के दिन शहरी वातावरण से दूर ज्ञानोदय तीर्थक्षेत्र में विशाल दिगम्बर जैन मिलन समारोह में विशिष्ट अतिथि के रूप में नवनिर्वाचित विधायक श्री नानकराम जगतराय ने जैन समाज के प्रति आभार प्रदर्शित करते हुए कहा कि मेरे लिये जो भी सेवा आप बतलायेंगे वह मैं सहर्ष करने को तत्पर रहूँगा। समिति की ओर से श्री माणकचन्द्र जैन वकील व श्री ज्ञानचंद जैन द्वारा माल्यार्पण व शाल ओढ़ाकर केशरिया तिलक कर इनके साथ पधारे अन्य गणमान्य अतिथियों का भी स्वागत किया गया।

समिति के अध्यक्ष श्री भागचन्द्र गदिया ने बतलाया कि क्षेत्र पर स्थित गोशाला के लिये भारतीय जीव जन्तु कल्याण केन्द्र, चेन्नई द्वारा भगवान् महावीर के 2600वें जन्म कल्याणक वर्ष के अन्तर्गत 90,000 रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ तथा बड़े हर्ष की बात है कि गोशाला आदि हेतु समिति को दिये दान के लिये धारा 80 जी के तहत छूट का प्रावधान भी स्वीकृत हो गया है अत: विमुक्तहस्त से दान देकर पुण्यार्जन कीजियेगा।

सह-प्रचार-प्रसार संयोजक हीराचन्द्र जैन ने बतलाया कि दिनांक 21 मार्च से 28 मार्च तक क्षेत्र पर भी शान्तिलाल कासलीवाल, ब्यावर की ओर से श्री सिद्धचक्र मंडल विधान पूजन का भव्य कार्यक्रम सानंद सम्पन्न हुआ। समापन के दिन समिति की ओर से श्री कासलीवालजी का भावभीना सम्मान किया गया तथा इनकी ओर से पूजार्थियों एवं उपस्थित धर्मप्रेमी बन्धुओं के लिये भोजन व्यवस्था रखी गयी।

हीराचन्द्र जैन, सह प्रचार-प्रसार संयोजक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

डॉ. पन्नालाल जी साहित्याचार्य

जबलपुर-जैन समाज के गौरव, माँ जिनवाणी के सच्चे उपासक, प्रेम, वात्सल्य, करुणा के संगम श्रद्धेय डॉ. पंडित पन्नालाल जी की प्रथम पुण्यतिथि एवं डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य श्रुत संवर्धन सम्मान समारोह विद्वत्संगोष्ठी के साथ प्रकाण्ड विद्वानों की गरिमामय उपस्थिति में सानंद सम्पन्न हुआ। प्रथम श्रुत संवर्धन सम्मान बाल ब्रह्मचारी अध्यात्म मनीषी चारित्रनिष्ठ विद्वान, ज्ञान वैराग्य के अनुपम संगम परम श्रद्धेय 'रतनलाल जी शास्त्री' इन्दौर के कर कमलों में शोभायमान हुआ। कार्यक्रम के प्रथम सत्र में दैनिक भास्कर के सम्पादक श्री गोकुल शर्मा ने भावविभोर होते हुए कहा-मैने जब जब श्रद्धेय पन्नालालजी को देखा तो मुझे लगा कि यदि किसी को जैन श्रावक का शास्त्रोक्त स्वरूप देखना हो तो वह पन्नालाल जी को देख ले। जैन धर्म, सिद्धान्त और संस्कृति का साकार रूप, जैनत्व की मूर्ति यदि पंडित जी को कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। प्रतिभा, विद्वत्ता एवं ज्ञान पंडित जी के स्वरूप से टपकता था। विद्वत्ता के साथ शारीरिक एवं आरम्भिक उल्लास से ओत-प्रोत पंडित जी के व्यक्तित्त्व में आत्मविश्वास एवं प्रतिभा की चमक स्पष्ट दिखाई देती थी। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए भूतपूर्व सांसद डालचंदजी जैन ने कहा कि पंडित जी ने जो लिखा है वह सम्मान से पढ़ा जाता है। अत: "कुछ ऐसा लिख जाओ कि लोग चाव से पढ़ें, कुछ ऐसा कर जाओ कि लोग याद करें।" ब्र. विनोदजी ने कहा कि ज्ञान तो प्राणी मात्र में पाया जाता है, लेकिन उस ज्ञान के साथ दिव्यता है, अलौकिकता है तो ज्ञान विश्ववंद्य हो जाता है। वर्णी गुरुकुल के अधिष्ठाता ब्र. जिनेशजी ने कार्यक्रम का सफल एवं सरस संचालन करते हुए कहा कि परिश्रम से, पसीने से ही पंडित जी का व्यक्तित्व जैनत्व के आकाश पर चमका। संचालक, ब्र. प्रदीप जी 'पीयूष' ने कहा कि गुरुकुल की बगिया को ज्ञानामृत के नीर से सींचकर पंडित जी ने जैन समाज के ऊपर महान उपकार किया है। ब्र. सुरेन्द्र जी 'सरस' ने कहा कि ग्वाले से ज्ञानी बनाने की कला में सिद्धहस्त साधक पंडितजी सदा याद रहेंगे। डॉ. भागचंद 'भागेन्दु' ने साहित्याचार्य जी के 75 वर्षों तक अनवरत लेखन, ग्रन्थ प्रणयन पर प्रकाश डालते हुए कहा-पंडितजी ने अश्रान्त और अक्लान्त प्रतिभा से अनेक ग्रन्थ रत्नों का प्रणयन एवं सम्पादन कर संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश के युग में विवेकशील जिज्ञासुओं की अभिलाषाओं को तृप्त किया। हिन्दी के युग में मौलिक संस्कृत साहित्य का सृजन एवं स्वोपज्ञभाष्य कर स्वात: सुखाय के साथ सर्वजन हिताय का आदर्श भी प्रस्तुत किया। लब्ध प्रतिष्ठित प्रतिष्ठाचार्य श्री गुलाबचंद जी 'पुष्प' ने कहा-श्रद्धेय पंडितजी ने सतत ज्ञानाराधना करके अज्ञान के अन्धेरे को दूर करने का जो प्रयास किया, वह सराहनीय है। आयु कर्म पूर्ण होने पर शरीर तो तिरोहित हो जाता है, पर जीवनकाल में किये गए उपकारों का अन्त नहीं होता। वर्णी गुरुकुल ने पंडित जी के प्रति श्रद्धाभक्ति की जो मिसाल कायम की है वह मशाल बने और अगले वर्ष दो दिवसीय गोष्ठी नहीं, सप्त दिवसीय शिविर लगे ताकि पंडितजी के योगदान पर व्यापक चर्चा हो सके। ब्र. पवन कमल जी ने कहा कि पंडित जी के कृतित्व को और अधिक स्मरणीय बनाना हमारा कर्त्तव्य है। पं. श्रेयांस दिवाकर जी ने कहा कि जिनवाणी की गोद सूनी होती है, कोख नहीं। पंडित खेमचंद जी ने कहा कि पंडित जी विद्वद्रत्न के साथ नर-रत्न भी थे। पंडित जी के मुख से नि:सृत अमृत भारती का पीयूष पीकर हजारों छात्र धन्य हुए। संसार में बुराइयों, दोषों की चर्चा करने वालों की कमी नहीं है, पर पन्नालालजी गुरुवर छात्रों के सद्गुणरूपी देवता को प्रोत्साहित कर विकास का पथ प्रशस्त करते थे। डॉ. उदय चंद जी ने महान् शिक्षा शास्त्री पंडित जी को प्रगतिशील विचारवादी मानते हुए कहा-पंडित जी का जीवन साहित्य एवं संस्कृतिमय था। ज्ञान रूपी रथ में आरूढ़ महामना ही संसार का कल्याण करते हैं। ख्याति लब्ध साधक ब्र. राकेश जी ने पंडित जी की लघुता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि बीसों बार अध्ययन कर चुके धर्म ग्रन्थों को भी पंडित जी पढ़ाने के पूर्व पढ़ते थे। पंडितजी की ज्ञान साधना अहं शून्य थी। शायद इसीलिये पंडितजी को अपने क्षयोपशम पर अधिक विश्वास नहीं था। नवभारत के महाप्रबंधक अनिल वाजपेयी ने कहा-मोक्षमार्ग के जटिल ज्ञान को भाषाओं की दुरूहता से निकाल कर हिन्दी में प्रस्तुत किया, अत: आपका ज्ञान मानव के लिए मोक्ष का पथ था। ब्र. धर्मेन्द्र जी ने कहा कि सरल हृदय गुरुदेव का हर हृदय में परम आदरणीय उच्च स्थान है। ब्र. श्री रतनलाल जी शास्त्री, इन्दौर ने अत्यंत विनम्र भाव से कहा-जब तक हृदय में श्वास रहेगी, तब तक श्रद्धेय पन्नालाल जी स्मृति में रहेंगे। पंडित जी ने परिवार, समाज एवं धर्म के लिये जो अमूल्य योगदान दिया है उसे भुलाया नहीं जा सकता। ब्र. संजीव ने कहा कि पंडित जी के व्याख्यान को सुनकर ही मेरे मन में जैन धर्म के अध्ययन के प्रति भाव जाग्रत हुए अत: वह मेरे गुरु हैं।

आचार्यश्री विद्यासागर जी, वर्णीजी एवं पंडितजी के चित्र अनावरण के साथ मंगलाचरण सुश्री रमा वैद्य ने किया। दीप प्रज्वलन, नव भारत के महाप्रबंधक अनिल बाजपेयी व श्री गुलाबचंद जी दर्शनाचार्य ने किया। कार्यक्रम के अन्य वक्ता थे-श्री जीवन्धर शास्त्री, विंद्या बाई, ब्र.. अनिल जी, आर.के. त्रिवेदी, डॉ. राजेश जी, ब्र. संदीप जी, ब्र. धर्मेन्द्र जी, पं. दयाचंद जी सतना पं. रमेश चंद जी, ग्वालियर आदि। आभार प्रदर्शन महामंत्री कमल कुमार जी दानी ने किया।

ब्र. त्रिलोक जैन, वर्णी गुरुकुल, जबलपुर-3

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ द्वारा संचालित वर्ष 2002 के विभिन्न पुरस्कारों हेतु प्रविष्टियाँ आमंत्रित

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ द्वारा संचालित वर्ष 2002 के विभिन्न पुरस्कारों हेतु सम्यक् प्रस्ताव 31 जून 2002 तक आमंत्रित हैं।

1. कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ पुरस्कार - इस पुरस्कार के अंतर्गत चयनित कृति के लेखक को 25,000 रुपये नकद, शाल, श्रीफल से सम्मानित किया जाता है। इसके अंतर्गत अब तक 7 विद्वानों को सम्मानित किया,जा चुका है। जैन विद्याओं से संबद्ध किसी भी विषय पर लिखित मौलिक/प्रकाशित/ अप्रकाशित एकल कृति पर 2002 का प्रस्ताव देय है। निर्धारित प्रस्ताव पत्र एवं नियमावली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्यालय में उपलब्ध है।

2. ज्ञानोदय इतिहास पुरस्कार - इस पुरस्कार के अंतर्गत 11,000 रुपये की नकद राशि एवं प्रशस्ति प्रदान की जाती है। श्रीमती शांतिदेवी रतनलाल बोबरा की स्मृति में श्री सूरजमल जी बोबरा, इंदौर के सौजन्य से स्थापित ज्ञानोदय इतिहास पुरस्कार की स्थापना 1998 में की गई। अब तक दो विद्वानों को सम्मानित किया जा चुका है। विगत 5 वर्षों में जैन इतिहास के क्षेत्र में मौलिक शोध कार्य हेतु यह पुरस्कार प्रदान किया जाता है। चयनित कृति के प्रस्तावक को भी1000 रुपये की सम्मान राशि से सम्मानित किया जायेगा। प्रस्ताव हेतु नियमावली एवं प्रस्ताव पत्र कार्यालय में उपलब्ध हैं।

वर्ष 2000 एवं 2001 हेतु उक्त दोनों पुरस्कारों की घोषणा अलग से की जा रही है।

प्रविष्टि भेजने का पता -
डॉ. अनुपम जैन, 'मानद् सचिव'
कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ,
584, महात्मा गाँधी मार्ग, तुकोगंज
इंदौर - 542001 (म.प्र.)

महाराष्ट्र जैन इतिहास परिषद्

महाराष्ट्र जैन इतिहास परिषद् का द्वितीय अधिवेशन आरा (बिहार) निवासी प्रो. (डॉ.) राजाराम जैन, मानद निदेशक की श्रीकुन्दकुन्द भारती, नई दिल्ली की अध्यक्षता में भातकुली अतिशय क्षेत्र (अमरावती, महाराष्ट्र) में दिनांक 12-13 जनवरी को सम्पन्न हो गया। इसमें जैन इतिहास सम्बन्धी शोधपत्र वाचन, विशिष्ट भाषण तथा विविध सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन किये गए।

अपने विशिष्ट अध्यक्षीय भाषण में प्रो. राजाराम जैन ने खारवेल-शिलालेख के सन्दर्भ में महाराष्ट्र की प्राचीनता सम्बन्धी अनेक ऐतिहासिक सूत्रों का विश्लेषण करते हुए बतलाया कि महावीर युग में सारा दक्षिणापथ जैन संस्कृति का गढ़ था। इसीलिये मगध के द्वादशवर्षीय भीषण दुष्काल के समय आचार्य भद्रबाहु अपने नवदीक्षित शिष्य मगधसम्राट चन्द्रगुप्त को लेकर अपने 12000 साधुसंघ के साथ दक्षिणापथ कटवप्र (वर्तमान श्रवण बेलगोला) पधारे थे तथा वहीं से अपने पट्टशिष्य आचार्य विशाख के नेतृत्त्व में समस्त मुनिसंघ को दक्षिणापथ के सीमान्त प्रदेशों में जैनधर्म के प्रचारार्थ भेजा था।

अपने लम्बे भाषण में डॉ. जैन ने जैन संस्कृति के विकास में महाराष्ट्र के अपूर्व योगदान की चर्चा करते हुए वहाँ के आदिकालीन, मध्यकालीन एवं आधुनिककालीन साहित्य की शानदार परम्पराओं पर प्रकाश डालते हुए वहाँ की ऐतिहासिक तीर्थभूमियों की चर्चा की तथा महाराष्ट्र के बहुमुखी विकास के क्रम में वहाँ के स्वनामधन्य बालचन्द्र हीराचन्द्र दोशी, आचार्य समन्तभद्र जी महाराज, दानवीर माणिकचन्द्र जे.पी. रावजी साखाराम दोशी, ब्र. जीवराज गौतमचन्द्र दोशी, महिलारत्न मगनबाई, पद्मश्री सुमतिबाई जी, पं. नाथूराम प्रेमी, प्रो. डॉ. ए.एन. उपाध्ये, कर्मवीर भाऊराव पाटिल, सौ. सरयू ताई दफ्तरी, सौ. सरयू विनोद दोशी आदि के प्रगतिशील रचनात्मक योगदानों की तालियों की गडगड़ाहट के बीच मार्मिक चर्चा की।

अधिवेशन में अन्य उपस्थित विद्वान् वक्ताओं में-प्रो. डॉ. गजकुमार शहा (धुले), डॉ. पद्मा पाटील (कोल्हापुर), डॉ. जी.के.माने (अमरावती), डॉ. सौ. नलिनी जोशी (भण्डारकर इंस्टीट्यूट, पुणे), डॉ वी. के. चौगुले (हेरले, हातकडंगले), डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर, श्री वीरकुमार दोशी (आकलूज) डॉ. सी. एन. चौगुले, प्रो. सुधीर कोठावदे, प्रो. डॉ. विद्यावती जैन (आरा), प्राचार्या हेमलता जोहरापुरकर (इचलकरंजी), राजाभाऊ डोंणगाँवकर, प्रो. कमलाकर हणवंते, प्रो. एस.डी. खेरनार, प्रो. अ.म. सुतार, प्रो. आबासाहेब शिंदे, डॉ. दीपक तुपकर, सौ. लीना चवरे, प्रो. अजय फुलंवरकर, डॉ. प्रकाश पनवेलकर, श्रीशरद मेघाल, श्री पदमाकर क्षीरसागर, प्रो. प्रवीण वैद्य, प्रो. रतिकान्त शाहा, प्रो. प्रदीप फलटणे आदि प्रमुख थे।

इसका उद्घाटन अमरावती विश्व विद्यालय के कुलपति डॉ. सुधीर पाटिल ने किया। परिषद् के महासचिव श्रेणिक अन्नदाते ने परिषद् के कार्य-कलापों पर विस्तृत प्रकाश डाला तथा मंच-संचालन सौ. पद्मा चन्द्रकान्त महाजन एवं सौ. मीना गरीबे ने किया। परिषद् के अध्यक्ष श्री सतीश संगई ने धन्यवाद ज्ञापन किया।

सौ. पद्मा महाजन
5, गुलमोहर कैंप, अमरावती, महाराष्ट्र - 446202

जम्बूस्वामी की निर्वाणभूमि पर जम्बूस्वामी के समान ही एक कथानक और साकार हो उठा

इस युग के अंतिम केवली भगवान जम्बूस्वामी की निर्वाणभूमि-मथुरा चौरासी की पावन भूमि पर भगवान जम्बूस्वामी द्वारा उपदिष्ट वैराग्य एवं संयम का पथ उस समय साकार हो उठा, जब 12 मार्च 2002 को पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माता जी ने सैकड़ों श्रद्धालुओं के मध्य अपना केशलोंच सम्पन्न किया।

ज्ञातव्य है कि पूज्य गणिनी माताजी राजधानी दिल्ली के इण्डिया गेट से भगवान महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर (जि. नालंदा बिहार) के लिए मंगल विहार करते हुए मार्ग में फरीदाबाद, वल्लभगढ़, पलवल, होडल, कोसीकलां इत्यादि स्थानों पर व्यापक धर्म प्रभावना करते हुए 11 मार्च को उ.प्र. के एकमात्र सिद्धक्षेत्र-मथुरा चौरासी पहुँची, जहाँ 16 मार्च तक संघ विराजमान रहा। 17 मार्च को मथुरा चौरासी से विहार करके पूज्य माताजी एवं समस्त संघ 20 मार्च को आगरा पहुँच रहा है, जहाँ 6 अप्रैल-ऋषभ जयंती तक संघ का प्रवास रहेगा। पुनः वहाँ से विहार करके मई-जून तक संघ प्रयागतीर्थ पर पहुँचेगा।

पूज्य गणिनी माताजी के केशलोंच के अवसर पर श्रद्धालुओं को सम्बोधित करते हुए पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने कहा कि लगभग 2500 वर्ष पूर्व जिस प्रकार जम्बूस्वामी ने रात्रिभर अपनी वैराग्य चर्या से अपनी नवविवाहिता चार पत्नियों के रागभाव को परास्त किया था, उसी प्रकार 50 वर्ष पूर्व घर छोड़ते समय गणिनी ज्ञानमती माताजी ने भी रातभर अपने उत्कट वैराग्य भावों को प्रकट करके अपनी जन्मदात्री माँ के रागभाव को परास्त करते हुए अपने दीक्षा पथ को प्रशस्त किया था। पूज्य चन्दनामती माताजी ने जम्बूस्वामी के चरणों में बैठकर "श्री जम्बूस्वामी चालीसा" की नूतन रचनाकर क्षेत्र को भेंट किया।

ब्र. कु. स्वाति जैन
(संघस्थ)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खाद्य पदार्थों पर चिह्न बनाना अनिवार्य

केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा 'भारत के राजपत्र' (असाधारण, 20 दिसम्बर 2001) में सा. का. नि. 908 (अ) क्रमांक पर अधिसूचना प्रकाशित कराई गई है, जो 'खाद्य अपमिश्रण निवारण (नवां संशोधन) नियम, 2001' नामक नियम शाकाहारी खाद्य पदार्थों से संबंधित है। इसमें 'शाकाहारी खाद्य' को भी परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार अब शाकाहारी खाद्य के प्रत्येक पैकेज पर खाद्य पदार्थ के नाम या ब्राण्ड नाम के बिल्कुल निकट मुख्य प्रदर्शन पैनल पर हरे रंग (ग्रीन कलर) से प्रतीक चिह्न बनाया जायेगा। **वृत्त के व्यास से दुगने किनारे वाली हरे रंग (ग्रीन कलर) की बाह्य रेखा वाले वर्ग के भीतर हरे रंग से भरा हुआ वृत्त बनाया जाएगा,** जिसके कारण वह खाद्य पदार्थ शाकाहारी खाद्य है, यह जाना-समझा जा सकेगा। 20 जून 2002 से प्रभावशाली होने वाले इस नियम में यह प्रतीक चिह्न [●] हरे (ग्रीन कलर) से बनाया जाएगा।

स्मरणीय है कि इससे पहले केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली ने 'भारत के राजपत्र' (असाधारण, 4 अप्रैल 2001) में सा. का. नि. 245 (अ) अधिसूचना प्रकाशित कराई थी। इस अधिसूचना में 'खाद्य अपमिश्रण निवारण (चौथा संशोधन) नियम, 2000' रूप में 'मांसाहारी खाद्य' पदार्थ को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया गया था कि "जिसमें एक संघटक के रूप में पक्षियों, ताजे जल अथवा समुद्री जीव-जन्तुओं अथवा अंडों सहित कोई समग्र जीव-जन्तु या उसका कोई भाग अथवा जीव-जन्तु मूल का कोई उत्पाद अन्तर्विष्ट होगा तो वह 'मांसाहारी खाद्य' माना जाएगा, किन्तु इसके अन्तर्गत दूध या दूध से बने हुए पदार्थों को मांसाहारी खाद्य नहीं माना जावेगा।" वह पदार्थ मांसाहारी खाद्य है, इस हेतु प्रत्येक पैकेज पर खाद्य पदार्थ के नाम या ब्राण्ड नाम के बिल्कुल नजदीक मुख्य प्रदर्शन पैनल पर **वृत्त के व्यास से दुगने किनारे वाली बाह्य रेखा वाले वर्ग के भीतर एक वृत्त [●] होगा, जो भूरे रंग (ब्राउन कलर) का होगा।**

ध्यातव्य है कि आम उपभोक्ता वर्ग को खाद्य पदार्थ खरीदते समय अब मांसाहारी खाद्य पदार्थ पर भूरे रंग (ब्राउन कलर) वाला तथा शाकाहारी खाद्य पदार्थ पर हरे रंग (ग्रीन कलर) वाला प्रतीक चिह्न देखकर खरीददारी करनी होगी। दोनों प्रकार के खाद्य पदार्थों पर प्रतीक चिह्न [●] एक-सा ही बना होगा, मात्र भूरे रंग (ब्राउन कलर) एवं हरे रंग (ग्रीन कलर) की भिन्नता ही उनके मांसाहारी या शाकाहारी खाद्य होने का अंतर करा सकेगी।

मांसाहारी या शाकाहारी खाद्य पदार्थों में यह प्रतीक चिह्न मूल प्रदर्शन पैनल पर विषम पृष्ठभूमि वाले पैकेज पर तथा लेबलों, आधानों (कन्टेनर्स), पम्पलेट्स, इश्तहारों या किसी भी प्रकार के प्रचार माध्यम आदि के विज्ञापनों में उत्पाद के नाम अथवा ब्राण्ड नाम के बिल्कुल नजदीक प्रमुख रूप से प्रदर्शित करना होगा। विनिर्माता, पैककर्ता अथवा विक्रेता को प्रचार माध्यमों में 100 सें.मी. वर्ग तक 3 मि.मी. न्यूनतम व्यास आकार वाले; 100 से 500 सें.मी. वर्ग तक 4 मि.मी., 500 से 2500 सें.मी. वर्ग तक 6 मि.मी. एवं 2500 सें.मी. वर्ग से ऊपर मूल प्रदर्शन पैनल क्षेत्र वालों पर 8 मि.मी. न्यूनतम व्यास आकारवाले प्रतीक चिह्न का निर्माण उचित स्थान पर कराना होगा।

उपभोक्ता वर्ग से अपेक्षा की जाती है कि खाद्य पदार्थ खरीदते समय इस भूरे रंग (ब्राउन कलर) या हरे रंग (ग्रीन कलर) वाले प्रतीक चिह्नों को देखकर ही खाद्य पदार्थ खरीदें। जिन उत्पादकों आदि ने ये चिह्न अपने उत्पादों पर नहीं बनाये हों, उन्हें चेतावनी देवें तथा सक्षम अधिकारियों को भी अपनी शिकायत दर्ज कराकर अपने अधिकारों की सुरक्षा किये जाने की माँग प्रस्तुत करें। साथ ही केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, 150-ए, निर्माण भवन, नई दिल्ली के पते पर लिखकर मांसाहारी एवं शाकाहारी खाद्य पदार्थों पर रंगों की भिन्नता के बावजूद भी चिह्न की समानता होने से उपभोक्ता वर्ग के भ्रमित होने की संभावना का ज्ञान कराते हुए 'मांसाहारी खाद्य' (NON VEGETARIAN FOOD) या शाकाहारी खाद्य (VEGETARIAN FOOD) हिन्दी /अंग्रेजी में भी प्रतीक चिह्न के साथ ही अनिवार्य रूप से लिखे जाने की माँग प्रेषित करें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैत्री समूह द्वारा आयोजित

जैन युवा प्रतिभा सम्मान समारोह

(Young Jaina Award - 2002)

विगत वर्ष (2001) की तरह इस वर्ष भी समूचे भारतवर्ष के विशिष्ट योग्यता प्राप्त करने वाले जैन छात्र-छात्राओं का सम्मान मैत्री समूह के द्वारा आयोजित किया जावेगा।

सन् 2002 में 10वीं एवं 12वीं कक्षा (State/CBSE), में 75% से अधिक अंक अर्जित करने वाले तथा CPMT/State PMT, CPET/State PET, NTSE और IIT में चयनित (Select) होने वाले जैन छात्र-छात्राएँ अपनी मार्कशीट एवं स्थायी पता सहित अपना पासपोर्ट साइज फोटोग्राफ निम्न पते पर भेजकर अपना नाम दर्ज कराएं।

सुरेश जैन, आई.ए.एस.
30, निशात कॉलोनी, भोपाल- 462 003
दूरभाष : (0755) 555533 फैक्स : (0755)468049
E-mail : sureshjain17@hotmail.com

मैत्री समूह

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org